Fortnightly per copy Rs. 4/-

ओ३म्

18th December 2023

आर्य जीवन

ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Website : http://www.aryasabhaapts.org

Narendra Bhavan Telephone : 040 24760030

Date of Publication 2nd and 17th of every Month, Date of Posting 3rd and 18th of every Month

प्रधान सभा प्रो. विट्ठल राव आर्य ने एक सौ पौधारोपण के लक्ष्य को १५० पौधारोपण कर पूर्ण किया ।

प्रधान सभा प्रो. विट्ठल राव आर्य जी ने कहा कि

पौधारोपण और यज्ञ साथ-साथ चलना चाहिए ।

चित्र में पौधारोपण करते हुए प्रधान सभा साथ में श्री के. नारायणा प्रधान अध्यापक, श्री जी. नारायणा कार्यकर्ता तथा हितैषी श्री सुब्बाराव जी

चिन्ता को चिन्तन से जीते

– आचार्य चंद्रशेखर शास्त्री

वर्तमान समय में चिंता एक बड़ी समस्या बनी हुई है। मानवीय स्वभाव में चिंता लगातार प्रज्ज्वलित है। चिंता की ज्वाला दावानल का रूप लेकर व्यक्ति के स्वास्थ्य शांति और सुकून को भस्म कर रही है। आज का मनुष्य तनाव अवसाद से ग्रसित होकर रक्तचाप मधुमेह जैसी बीमारियों के चुंगल में आ गया है। वर्तमान में जिसे हम लाइफस्टाइल कहते हैं वह हमारी बहुत सी समस्याओं का कारण है। जब लाइफस्टाइल की बात आती है तो भौतिक रूप से बाहरी कारणों पर नजर डालता है। वह अपने उठने, खाने, सोने, जगने पर बात करने लगता है। यह भी लाइफस्टाइल का हिस्सा है, किंतु हमारा सोचने का ढंग किसी भी विषय पर प्रतिक्रिया करने का तरीका और व्यवहार भी जीवन का या लाइफस्टाइल का एक अभिन्न अंग है। अगर आप हर बात पर त्वरित प्रतिक्रिया करेंगे तो उस समय आपका रक्तचाप बढ़ने लगेगा। हम सभी को अपने चिंतन में यह बात लानी चाहिए शांति और सुकून हम किसी से मांग कर नहीं ले सकते। इसके लिए हमें स्वयं की मनःस्थिति को बदलना होगा। चिंता एक बड़ी बीमारी है जो अपने संग टेंशन, डिप्रेशन, ब्लड प्रेशर, शुगर जैसी अनेक बीमारियों की जननी है। इस बात पर इशारा करते हुए आचार्य चाणक्य ने लिखा है –

चिता, चिन्ता समाप्रोक्ता बिंदुमात्रं विशेषता।
सजीवं दहते चिंता निर्जीवं दहते चिता।।

चिता और चिन्ता को एक समान समझते हैं, किंतु यह सच नहीं है। चिंता, चिता से बड़ी है क्योंकि चिता निर्जीव व्यक्ति को जलाती है और चिन्ता सजीव जीवित व्यक्ति को जला देती है।

चिन्ता को चिन्तन से जीता जा सकता है। मन का कार्य ही है सोचना। किंतु कई बार हम स्वयं के बारे में न सोच कर दूसरों के बारे में सोचते हैं। यह ज्यादा सोचते हैं कि लोग हमारे बारे में क्या सोचते हैं? इस पर व्यंग्य करते हुए किसी ने लिखा है लोग क्या सोचेंगे यह भी अगर हम सोचेंगे तो फिर वह क्या सोचेंगे? हम सभी को अपना जीवन, अपना व्यवहार, अपना स्वास्थ्य, अपनी मुट्ठी में रखना चाहिए। अपने सुकून की चाबी कभी दूसरों के हाथों में नहीं रखनी चाहिए। चिता और चिन्ता में मात्र १ बिंदु का अंतर है किंतु इसका स्वभाव और गुण एक दूसरे से बहुत अलग है। चिंता आपको नकारात्मकता देकर अंधेरे में धकेल देती है जबकि चिंतन आपको सकारात्मकता देकर जीवन को दिशा देने के लिए प्रेरित करता है। इसलिए चिंता को चिंतन से ही जीता जा सकता है। गीता का सार भी यही है। कर्म को करने में समय और ऊर्जा लगाइए। उसका फल मुझे तुरंत नहीं मिला कब मिला इस बात की चिंता करनी छोड़ देनी चाहिए। यही ईश्वर की ओर बढ़ने का एक मार्ग है।

प्राचीन समय में एक राज्य भयंकर अकाल से पीड़ित हो गया था। जिसके कारण राजा को बहुत नुकसान का सामना करना पड़ा, न तो उसे कर मिला और न ही जनता से लगान। अब राजा इस बात से चिंतित रहने लगा कि व्यय को कैसे कम किया जाए, ताकि राज्य का काम बिना किसी परेशानी के चलता रहे।

साथ ही राजा इस चिंता में भी था कि भविष्य में अगर फिर कोई ऐसा अकाल पड़ गया तो पड़ोसी देश के राजा हमला भी कर सकते हैं। राजा ने एक बार अपने ही मंत्रियों को राज्य के विरुद्ध षडयंत्र रचते हुए भी पकड़ा था।

इन सभी चिंताओं की वजह से राजा को नींद भी नहीं आ रही थी और न ही उन्हें भूख लगती थी।

राजा के शाही बाग का एक माली था, राजा रोज उसे देखता था, वह प्याज-चटनी के साथ पेट भरकर भोजन ग्रहण करता था और खुश रहता था।

राजा के एक गुरु थे, उन्होंने राजा से कहा अगर तुम वाकई मुझे अपना गुरु मानते हो तो यह राजपाट मुझे सौंप दो, तुम महल में रहो, सिंहासन पर बैठो और एक कर्मचारी की भांति मेरे राज्य का ध्यान रखो। मैं तो साधु हूं और आश्रम में ही रहूंगा लेकिन तुम्हें मेरे लिए यह काम करना होगा।

राजा ने उनकी बात मान ली और खुशी-खुशी एक कर्मचारी की भांति राज्य का ध्यान रखने लगे। काम तो वही था लेकिन अब राजा को किसी जिम्मेदारी या चिंता में लदा हुआ नहीं था। कुछ महीनों बाद उसके गुरु आए। उन्होंने राजा से पूछा कहो तुम्हारी भूख और नींद का क्या हाल है। राजा ने कहा कि मालिक अब खूब भूख भी लगती है और मैं चैन की नींद सोता भी हूं।

गुरु ने राजा को समझाया कि बदला कुछ भी नहीं है, जो काम पहले तुम्हारे लिए बोझ था, वह अब तुम्हारा कर्तव्य बन गया था। हमें ये जीवन कर्तव्यों को पूरा करने के लिए मिला है। किसी चीज को अपने ऊपर बोझ की तरह लादने के लिए नहीं। चिंता करने से परेशानियां बढ़ती हैं इसलिए ज्यादा सोचना नहीं चाहिए। एक बार एक आदमी अपने दोस्त से पूछा कि रात को मच्छर काटे और खुजली हो तो क्या करना चाहिए ? उस व्यक्ति ने बड़ा सीधा सा जवाब दिया उसने कहा चुपचाप सो जाना चाहिए मच्छर को मारना चाहिए और सो जाना चाहिए। क्योंकि आप रजनीकांत तो हो नहीं मच्छर से सहरी बुलवा लोगे। सारी समस्या इस बात पर है कि हम स्वयं को रजनीकांत कब नहीं समझते। और पूरी दुनिया को सहरी बुलवाने में लगे रहते हैं।

मैंने अपनी जिंदगी को कुछ इस तरह आसान कर लिए।

किसी से माफी मांग ली, किसी को माफ कर दिया।।

चिंता ऐसी डाकिनी काट करेजा खाए वैद्य बेचारा क्या करें कहां तक दवा खवाए।।

आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र.-तेलंगाना का अंतरंग और साधारण अधिवेशन

Lr.No. Election Sabha / 406278 / 2023-24 / 5 **Reminder** Lr.No. Election Sabha/406278/2023-24/5 Date : 8-11-2023

ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆంధ్రప్రదేశ్ (ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ) యొక్క అంతరంగ్ మరియు సర్వసభ్య సమావేశము

ఆర్య !

ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆంధ్రప్రదేశ్ (ఆ.ప్ర. -తెలంగాణ) యొక్క అంతరంగ్ మరియు సర్వసభ్య సమావేశము తేది 24-12-2023 ఆదివారము రోజున ఉదయం గం॥ 10-30 ని॥లకు పండిత్ నరేంద్ర భవనములో ఏర్పాటు చేయనైనది. సభ యొక్క గౌరవ సభాసదులు, కొత్తగా ఎన్నికైన గౌరవ సభ్యులు మరియు ఆర్య సమాజముల అధ్యక్షులు, మంత్రివర్యులతో మనవి ఏమనగా అంతరంగ్ మరియు సర్వసభ్య సమావేశమునకు సకాలముగా విచ్చేసి సమావేశమును జయప్రదం చేయగలరని కోరుతున్నాము.

ఎజెండా :

1. గాయత్రి మంత్ర పాఠముతో సమావేశము ప్రారంభము.
2. దివంగతులైన మహానుభావులకు శ్రద్ధాంజలి.
3. గత సర్వసభ్య సమావేశములో నిర్ణయించిన తీర్మాణాలను బలపరచుట
4. 2022-23 సంవత్సరమునకు సంబంధించి ఆదాయ వ్యయముల వివరణ (రిపోర్ట్)
5. ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఎన్నికలు నిర్వహించుటకై ఆర్య సమాజముల నుండి స్వీకరించబడిన ప్రార్థన పత్రములపై చర్చ మరియు నిర్ణయము. అనివార్యమైనచో 2024-2026 సంవత్సరములకు ఎన్నికలు నిర్వహించుటకు సర్వసమ్మతితో నిర్ణయము మరియు సర్వసమ్మతితో అనివార్యమైనచో ఎన్నికల ఎజెండాను నిర్ణయించి ఎన్నికలను నిర్వహించుట.
6. దేశ సమస్యలకు సంబంధించిన జాతీయ విషయాలపై చర్చ మరియు స్వామి దయానంద సరస్వతి యొక్క 200 జన్మజయంతి సమావేశాలను నిర్వహించుటకై చర్చ మరియు నిర్ణయము.
7. ఇతర విషయాలు అధ్యక్షుల వారి అనుమతితో చర్చించ బడతాయి.
8. శాంతి పాఠముతో సమాశము ముగింపు.

భవదీయ

వెంకట రఘురాములు — మంత్రి సభ

విఠల్ రావు ఆర్య — ప్రధాన్ సభ

సేవలో
అధ్యక్షులు/మంత్రివర్యులు,
ఆర్య సమాజము..................................
....

आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र.-तेलंगाना का अंतरंग और साधारण अधिवेशन

मान्यवर महोदय,

आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश (आ.प्र.-तेलंगाना) का अंतरंग एवं साधारण अधिवेशन दिनांक 24-12-2023 रविवार के दिन प्रातः 10-30 बजे से पण्डित नरेन्द्र भवन में आयोजित किया गया है । माननीय सभा के प्रतिनिधियों, नव निर्वाचित प्रतिनिधियों एवं आर्य समाजों के प्रधान व मंत्रीगणों से निवेदन है कि अधिवेशन में समय से पधारकर अधिवेशन को सफल बनाएं ।

विषय सूची :

१. गायत्री मन्त्र पाठ से अधिवेशन का आरम्भ ।
२. दिवंगत महानुभावों के प्रति श्रद्धांजलि ।
३. गत कार्यवाही की सम्पुष्टि ।
४. 2022-23 वर्ष का आय व्यय विवरण ।
५. सभा के चुनाव हेतु प्रतिनिधि आवेदन पत्रों पर विचार और निर्णय । आवश्यकतानुसार वर्ष 2024-2026 के लिए चुनाव करवाए जाने के लिए सर्वसम्मति से निर्णय तथा सर्वसम्मति हो तो चुनाव की विषय सूचि का निर्धारण और चुनाव ।
६. राष्ट्रीय नीतिगत विषय तथा स्वामी दयानन्द सरस्वती की 200 वीं जयंती के आयोजन पर विचार व निर्णय ।
७. अन्य विषय प्रधान जी की अनुमति से ।
८. शांतिपाठ के साथ अधिवेशन समाप्त ।

भवदीय

वेंकट रघुरामुलु — मन्त्री

विट्ठल राव आर्य — प्रधान

सेवा में
प्रधान व मंत्री आर्य समाज.......

वेद के मरुद्गण और उनके अश्व

-पं. जयदेव शर्मा विद्यालंकार

वेद के किसी भी विषय पर विचार करना एक समस्या है । कुछ विचारक तो उसमें ऐतिहासिक पुट देकर विचार करते हैं, और कोई उनमें से वैदिक कालिक तथ्यों का निर्धारण करना चाहते हैं, कुछ व्यक्ति बहुत ऊंची उड़ान भर कर कुछ नवीन शोधों की वेद काल में सत्ता बतलाने का यत्न करते हैं । परन्तु वास्तविक दृष्टि क्या हो, यह एक समस्या है ।

वेद को आप जिस ढंग का समझना चाहेंगे, उसका अनुशीलन आप उसी दृष्टि से करने लगेंगे । अपनी रंगीन आंखों से वेद को देखने की अपेक्षा वेद को निर्व्याज दृष्टि से देखना चाहिए । वह मन्त्र जो कुछ बतला रहा है, वही वेद का तथ्य है ।

वेद ईश्वरीय ज्ञान होने से उसमें ऐतिहासिकता का विचार करके वेद के साथ किसी काल को बान्ध कर उसमें कथित तत्व या पदार्थ को उस समय की घटना मान लेना, यह भी वेद पर एक बलात्कार है ।

उदाहरण के रूप में जैसे-ऋग्वेद में आया है-

रथेषु पृषतीः अयुग्ध्वम् । ऋ.१।८५।४॥

रथों में पृषतियों को जोड़ो । इस पर लेखक ने अनुमान लगाया है कि पृषती का अर्थ धब्बों वाली हरिणी है । और हिरन की गाड़ियां बर्फानी भूमि पर ही चलती हैं । ऊंची नीची जमीनों पर वे चल नहीं सकती । वे मन्त्र मरुत् सम्बन्धी हैं । इन वीरों के लिए हिरणियां तथा हिरनों में से बड़े हिरन जोड़े जाते थे ।

ऋग्वेद में इस प्रकार के अन्य भी अनेक मन्त्र है, जिनका ऐसा भाव निकलता है । जैसे-

एषां रथे पृषतीः । ऋ.१।८५।५॥
रथेषु पृषतीः अयुग्ध्वम् । ऋ.१।३९।५॥
पृषतीः पृक्षं याथ । ऋ.२।३४।३॥
संमिश्लाः पृषतीः अयुक्षत । ऋ.३।२६।४॥
रोहितः प्रष्टिर्वहति ॥ ऋ.१।३९।६॥८।७।२८॥

हमारे लिखने का यह अभिप्राय नहीं कि वेद में हिरणों से चलने वाली गाड़ियों का अभिप्राय नहीं निकल सकता । परन्तु हमारा अभिप्राय है कि वेद में इस प्रकार वर्णन पाकर यह कहना कि उस समय ऐसी स्लेज गाड़ियों में वीर लोग हिरणों को रथों में जोड़ते थे । यह ऐतिहासिक सी घटना कह डालना एक साहस का काम है । कारण ? कारण यह है कि वेद के मन्त्रांश इतिहास का वर्णन नहीं करते हैं । वह एक त्रिकालोचित सत्य का उपदेश कर सकते हैं । जिस ढंग से हिरणों की गाड़ी वेद में निकाली गई है, उसी प्रकार क्योंकि बर्फीले स्थानों में कुत्तों से गाड़ी खिंचाई जाती है, तब वेद में कुत्तों की गाड़ी की भी खोज की जोगी । उस समय मरुत्=वीर कुत्तों को भी गाड़ी में जोतते थे, ऐसा अनुमान करना पड़ेगा ।

इस प्रकार अहंभावपूर्वक कल्पना-प्रसूत बातों से वेद की स्थिति पर्याप्त कलुषित होती है । हमारे कहने का तात्पर्य है कि वेद एक तथ्य का निर्देश करता है, वह किसी भी काल में होने वाली घटना की जिम्मेवारी अपने पर नहीं लेता है ।

ऊपर जो उद्धरण वेद-मन्त्राशों के दिए हैं, उनके सम्बन्ध में अन्य भाष्यकारों पर विचार किया जाए तो मथ्य के अन्य पहलू भी सामने आ जाते हैं ।

सायण ने लिखा है-ये पृषतीभिः अजायन्त १।३७।२

ये मरुतः पृषत्यादिभिः साकं स्वभावनः स्वकीयदीप्तियुक्ताः अजायन्त । पृषत्यो बिन्दुयुक्ता मृग्योमरुद्वाहनभूताः । पृषत्यो मरुताम् । -नि. १।१५।१६॥
इतिनिघण्टावुक्तत्वात् ।

अर्थात् जो मरुद्गण पृषती आदि साधनों से स्वयं दीप्तियुक्त हो जाते हैं । पृषती बिन्दुओं वाली मृगियां हरिणियां है, वे मरुतों की सवारी हैं, क्योंकि निघण्टु में लिखा है कि पृषतियां मरुतों की हैं ।

यदि थोड़ी देर के लिए यह मान लिया जाए कि मरुतों के रथवाहन निघण्टु के अनुसार पृषतियां (हरिणी जाति के विशेष पशुमादाएँ) थीं । वे वेद ने कही हैं, तो वेद में मरुतों के सम्बन्ध में अश्वों का वर्णन नहीं होना चाहिए । परन्तु मरुतों के अश्वों का वर्णन है । जैसे-ऋ.५।५९।७॥

मन्त्र में

अश्वास एषामुभये यथा विदुः

इनके अश्व होते हैं, जिनके सम्बन्ध में विद्वान् और साधारण जन सब जानते हैं । श्री पं. जी ने भी उपसंहार में माना है कि मरुतों के रथ अनेक प्रकार के थे । अश्व-रथ, हरिणरथ, अश्वरहित रथ, आकाश सन्चारी रथ, अश्वपर्णरथ, वे आकाश गामी विमानों की पंक्तियां करके इनका सन्चार होता था । इत्यादि । आगे पं. जी परिणाम निकालते हैं कि मरुद् वीर मनुष्य ही थे, इनके देवत्व उनके शुभ कर्मों से प्राप्त हुआ था । मरुद् वीर गृहस्थ होते थे, इन वीरों के आक्रमण भयंकर सब को भयभीत करने वाले होते थे । इत्यादि । इस प्रकार पं. जी ने मरुतों के सम्बन्ध में १२ पृष्ठ का एक विशाल लेख लिख कर वेद के मरुतः को एक ऐतिहासिक व्यक्तियों का वर्ग मान लिया है ।

इससे वेदों के सम्बन्ध में एक विपरीत भावना का उदय होता है, वेद एक ऐतिहासिक वस्तुओं का वर्णनात्मक ग्रन्थ हो जाता है, और अभी तक प्राचीन विद्वानों ने जिस दृष्टि से वेद साहित्य को देखा था, उससे विपरीत दृष्टि से लोग देखने लगते हैं ।

हमें इसमें विवाद नहीं है कि मरुतः देवताक मन्त्रों में वीरों का वर्णन है, वीरों के अश्वों, रतों, और बमानों, आकाशगामी यानों का भी वर्ण है, परनतु वे मरुतः कोई इतिहास काल के मनुष्य नहीं हुए थे । प्रत्युत वह सामान्य वर्णन है ।

मरुतः यदि गृहस्थ हैं, तो अब भी गृहस्थ मरुत् हैं । यदि मरुतः विश् हैं, तो प्रजाएं या वैश्य गण अब भी मरुत् हैं । यदि मरुतः वीरगण हैं, तो अभ भी वीर गण मरुत् ही हैं और उनके योग्य कर्तव्य कर्मों का वेद मन्त्रों में वर्ण है ।

यदि अधिभौतिक दृष्टि से मरुतः ऐसे तत्व हैं जो वायु के प्रकार भेद हैं, तो उनका भी वर्णन वेद में है और इस तथ्य का उल्लेख भी विद्वान् भाष्यकारों ने किया है । उदाहरण के तौर पर ऋ. ५।५९।७॥ को नीचे लिखते हैं-

वयो न ये श्रेणी तत्पतुरोजसा अन्तान् दिवो बृहतः सानुनस्परि ।

-शेष पृ. १५ पर

अश्वास एषामुभये यथा विदुः स पर्वतस्य नभनूँरचुच्युवुः ॥

श्री पं. सातवलेकर जी ने इस मन्त्र का अर्थ-अभिप्राय निम्न लिखित किया है-ये वीर (वयः न) पक्षियों केसमान (श्रेणीः) श्रेणियां बान्ध कर (ओजसा) वेग ने (दिवः अन्तान्) आकाश के अन्त तक (बृहतः सानुनः परि) बड़े २ पर्वतों के शिखरों पर (परि पप्तुः) उड़ते हैं, पहुँचते हैं। इनके (अश्वासः) घोड़े, पर्वतों के टुकड़ें करके वहां से (प्र अचुच्युवुः) जल को नीचे गिराते हैं।

इस पर पं. जी ने टिप्पणी दी है-इस मन्त्र में आकाश के अन्त तक श्रेणियां पक्षियों के समान बनाना और उड़ना तथा पर्वतों के शिखरों पर पहुँच कर शिखरों को तोड़ना यह विमानों के बिना नहीं हो सकता। आकाश में पक्षी पंक्तियों बान्ध कर घूमते हैं, वैसे ही ये वीर पंक्तियां बनाकर विमानों में बैठ कर आकाश के अन्त तक भ्रमण करते हैं, विमानों की श्रेणियों से ही यह वर्णन सार्थक हो सकता है।

आगे लिखते हैं-इस तरह विमान भी इन वीरों के पास थे, ऐसा हम कह सकते हैं। पक्षियों के समान बड़े आकाश में पंक्तियां बान्ध कर भ्रमण करना हो तो विमान उनके पास चाहिए, इसमें सन्देह नहीं। आकाश के अन्त तक (वयः न श्रेणीः दिवः अन्तान् परिपप्तुः) पक्षियों के समान श्रेणियां वा पंक्तियां बनाकर भ्रमण करते हैं, यदि यह वर्णन सत्य है तो मरुद् वीरों की विमानें थी और वे विमानें आकाश में श्रेणियों से घूमती थीं।

श्री पं. जी ने बहुत सावधानी से वेद मन्त्र के लौकिक भूतकालिक प्रयोगों का अर्थ भूतकालिक नहीं किया परन्तु परिणाम निकालते समय वे भूतकाल की लपेट में आ गए।

इस मन्त्र में आकाश के अन्त तक जो अर्थ किए है वह कोई महत्व का नहीं है, अन्त का अर्थ अवयव या प्रदेश मात्र है, मरुत् वीर (दिवः अन्तान्) आकाश के अनेक प्रदेशों को जाते हैं। अर्थ-स्पष्ट है। परन्तु घोड़े पर्वतों के टुकड़े करके जल को नीचे गिराते हैं, यह पं. जी का अर्थ कुछ संगत नहीं होता। क्योंकि विमानों में गोड़े नहीं लगते हैं। वे पर्वतों को तोड़ें और पानी बहावें, यह भी कोई संगत बात नहीं जँचती है।

सायणाचार्य ने यह मन्त्र मरुतः- वायु पक्ष में लगाया है। वह इस प्रकार है- (ये मरुतः वयः न) जो मरुद् गण पक्षियों के समान (श्रेणीः) पंक्तियां होकर (ओजसा) बल से (दिवः अन्तान्) अन्तरिक्ष या आदित्य के पर्यन्त भागों तक (बृहतः सानुनः परिपप्तुः) ऊँचे आकाश मण्डल के सब ओर गति करते हैं, (एषाम् अश्वासः) इनके अस्व (पर्वतस्य नभनून्) मेघ के शब्द न करने वाले जलों को (प्र अचुच्युवुः) नीचे गिराते हैं। (उभए यथा विदुः) देव और मनुष्य दोनों जैसा जानते हैं। मनुष्यों का तो ज्ञान प्रसिद्ध ही है। और देवगण वृष्टि होने पर आग्रयण आदि यज्ञेष्टियों में हवि दे देने से जानते हैं। देवों का वृष्टिपूर्त्ति का ज्ञान आश्वलायन ने कहा है-

यदा वर्षस्य तृप्तः स्याद् आग्रयणेन यजेत इत्युपक्रम्य अपि हि देवा आहुस्तृप्तो नूनं वर्षस्य आग्रयणेन हि यजते।

अर्थात्-जब वृष्टि से तृप्त हो, तब अग्रयण यज्ञेष्टि करे। इस प्रकरण में कहा है, देव कहते हैं-वर्षण से तृप्त होकर आग्रयण यज्ञेष्टि करता है। (आश्व. श्री. २।९)

सायण के इस भाष्य से यह मन्त्र कहीं भी मरुत् वीरों के विमानों का वर्णन नहीं करता है। वह मरुतः शब्द से वायुओं का ग्रहण करता है, जो अन्तरिक्ष के दूर दूर के स्थानों तक गति करते हैं। उनके अश्व मेघ के जलों को नीचे गिराते हैं। और यह बात मनुष्य और देव गण दोनों वर्ग जानते हैं। सायण का यहां मरुतों के अश्वों से क्या अभिप्राय है, स्पष्ट नहीं है। मरुतों के अश्वच्क मेघ के जलों को नीचे गिराते हैं। इस स्थल में अवश्य ही अश्व चीतली हरिणियां नहीं हैं। यौगिक दृष्टि से अश्व अवश्य यहां शीघ्र गति से आने वाले झोंके या अन्य कोई पारिभाषिक तत्व जो मेघ में वेग से गति करता है, चाहे वह विद्युत् तत्व हो, अश्व शब्द से लेना चाहिए, ऐसा प्रतीत होता है।

हम इसी मन्त्र को अब ऋषि दयानन्द के भाष्य में देखते हैं। (ये ओजसा वयः न श्रेणीः पप्तुः) जो पराक्रम से पक्षियों के समान पंक्तियों को प्राप्त होते हैं। और (बृहतः सानुनः अन्तान् दिवः परि पप्तुः) बड़े शिखरवत् समीप वर्त्तमान व्यवहार करने वालों को प्राप्त होते हैं। (एषाम् उभए अश्वासः) उनके जो दो प्रकार के अश्व अर्थात् शीघ्र चलने वाले पदार्थ हैं, उनको (यथा विदुः) जिस प्रकार जानते हैं। और (वर्ततस्य नभनून् प्र अचुच्युवुः) मेघ के समूहों को खूब वर्षावें, वे संसार के आधार होते हैं।

ऋषि की इस योजना में मन्त्र में (ये) शब्द से किन का ग्रहण है, यह इस मन्त्र के भाष्य में स्पष्ट नहीं है।

भावार्थ में इतना लिखा है-जैसे पक्षी पंक्तिबद्ध हुए शीघ्र जाते हैं, ऐसे ही उत्तम प्रकार से शिक्षा युक्त नौकर, और घोड़े आदि वाहन तीनों मार्गों से शीघ्र जाते हैं।

सायण से दयानन्द का भेद-सायण मरुतः से वायुएं लेता है, ऋषि दयानन्द मरुतः) से शिक्षित भृत्य (सेना-भट) और घोड़े आदि वाहन लेते हैं। और सूक्त के पूर्व प्रकरण से वायु गण और विद्वद्‌गण वर्णन कहने से वायु और विद्वानों का भी ग्रहण करते हैं। पर्वत का अर्थ मेघ दोनों में समान है, नभनु शब्द से सायण जल और दयानन्द [(नभनून्) घनान्] मेघ के घनी भूत समूहों का ग्रहण करते हैं। दिवः अन्तान् से पं. सातवलेकर जी आकाश का अन्त या अन्तिम छोर लेते हैं दयानन्द समीपवर्त्ती व्यवहार करने वालों का ग्रहण करते हैं।

ऋषि दयानन्द ने दिशा का प्रदर्शन किया है कि मरुतों के दो प्रकार के अश्व हैं जो तीनों मार्गों में जाते हैं। तीन मार्ग हैं जल, स्थल, और अन्तरिक्ष। और (अश्वासः) अश्व ये घोड़े नहीं हैं, ये (सद्योगामिनः) शीघ्रगामी साधन मात्र हैं। इस मन्त्र की योजना वायुओं और वीर पुरुषों या राजा के सैनिक भृत्य, दोनों पक्षों में होनी चाहिए। (उभए अश्वासः) दो प्रकार के शीघ्रगामी क्या तत्व हैं, यह स्पष्ट नहीं होता है। तो भी भावार्थ में सुशिक्षिताः भृत्याः, अश्वादयो यानानि, ऐसा लेख होने से शिक्षित वीर सैनिक और तीव्रगामी अश्वादि वाहन जो तीनों मार्गों में जाने वाले हैं, वे लिए जा सकते हैं। भृत्यों के पक्ष में (दिवः बृहतः सानुनः) से शिखर के समान बड़े व्यवहार करने वाले महाव्यापारी, बड़े अफसर, अध्यक्ष अधिकारी लिए जाने चाहिए। वायुओं के पक्ष में बड़े-बड़े पर्वतशिखरों के पास व दूर महाआकाश के प्रदेश लेना उचित है, और वीर सैनिकों के पक्ष में बड़े-बड़े पर्वतों के शिखरों पर आकाश, और भूमि के दूर-दूर तक के प्रदेशों का ग्रहण करना उचित है।

वायु पक्ष में (पर्वतस्य नभनून्) मेघ की जल-धाराओं का प्रवर्षण ही लेना चाहिए।

संस्कार विहीन शिक्षा-बढ़ते अपराध

-नरेन्द्र आहूजा

देश में निरन्तर बढ़ते अपराधों विशेष रूप से अपनी आधी आबादी पर हो रहे बलात्कार जैसे जघन्य अत्याचारों को देखते हुए इसके कारणों और दूरगामी समाधानों पर जब हम विचार करते हैं तो देश की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में कमियां और दोष स्पष्ट दिखाई देते हैं । स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त देश के नीति नियन्ताओं ने इस प्रचलित शिक्षा प्रणाली का चुन लिया । इस शिक्षा व्यवस्था को ब्रिटिश गुलामी के दिनों में लार्ड मैकाले द्वारा इस देश को सदा सर्वदा के लिए मानसिक रूप से गुलाम बनाए रखने के लिए लागू किया था । लार्ड मैकाले ने इस शिक्षा प्रणाली को ब्रिटिश साम्राज्य की नीवें मजबूत करने के उद्देश्य से इस सोच के साथ थोंपा था कि हम इस देश की भावी पीढ़ी को उसकी संस्कृति की जड़ों से काट देंगे । परन्तु नाजाने क्यों किन कारणों से स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त देश के नीति नियन्ताओं ने गुलामी की मानसिकता की प्रतीक मैकाले की शिक्षा प्रणाली को अपनी भावी पीढ़ी के निर्माण के लिए अपना लिया । जिसके दुष्परिणाम हम अपने समाज की वर्तमान अवस्था में भुगत रहे हैं । मैकाले की इस शिक्षा प्रणाली में संस्कारों, धर्म शिक्षा आदि का कोई स्थान नहीं था । मैकाले की यह शिक्षा प्रणाली केवल अंग्रेजों की सेवा करने के लिए क्लर्क और बाबू बनाने के लिए थी । मैकाले की इस शिक्षा प्रणाली में वर्तमान समय में भी हम अच्छे डॉक्टर, इन्जीनियर, मैनेजर आदि तो बना सकते हैं लेकिन इसमें संस्कार देने की कोई व्यवस्था ना होने के कारण इन डॉक्टरों, इन्जीनियरों और मैनेजरों को हम एक अच्छा संवेदनशील मनुष्य बना पाने में पूरी तरह नाकाम हैं । यदि एक अच्छा डॉक्टर एक अच्छा इन्सान नहीं है तो ईश्वर का रूप समझा जाने वाला डॉक्टर सेवा की भावना से किए जाने वाले कार्य को धन कमाने का व्यवसाय बना लेते हैं और शायद तभी किडनी चोरी, कन्याभ्रूण हत्या, माँ के गर्भ में लिंग परीक्षण, दवाइयों और जांच में कमीशन खोरी जैसी घटनाएं सामने आती हैं और पूरे चिकित्सक समाज को शर्मिंदगी झेलनी पड़ती है । कमोबेश यही स्थिति इस शिक्षा प्रणाली से उत्पन्न प्रत्येक प्रकार के व्यवसायी की हो जाती है ।

इसके समाधान पर चिन्तन करते समय हम पाते हैं कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त उस समय तीन प्रकार की शिक्षा प्रणालियां हमारे देश में उपलब्ध थी । प्रथम प्राचीनतम गुरूकुलीय शिक्षा व्यवस्था जिसमें शिक्षार्थी ब्रह्मचारी अपने माता-पिता का लाड़ दुलार छोड़कर आचार्य के गुरूकुल में रहकर शिक्षा ग्रहण करते हुए नया जन्म पाते थे । गुरूकुलीय शिक्षा व्यवस्था में बिना किसी जाति, वर्ण या वर्ग भेद के सभी ब्रह्मचारी एक साथ गुरूकुल में स्थापित आचार्य की व्यवस्था के अन्तर्गत रहते हुए जीवन की शिक्षा संस्कार प्राप्त करते थे । यह गुरूकुलीय शिक्षा व्यवस्था पहली बार महाभारत काल में भंग हुई जब राजा धृतराष्ट्र ने पुत्रों के मोह में अन्धे होकर गुरू द्रोण को राज्य व्यवस्था के अन्तर्गत रहकर दुर्योधन आदि समस्त कौरवों को शिक्षा देने के लिए विवश कर दिया । तब शायद पहली बार दुर्योधन आदि को शिक्षा प्राप्त करते समय यह लगा कि हमारा आचार्य तो हमारे पिता की राज्य व्यवस्था के आधीन एक वित्तपोषित कर्मचारी है । अत एव उनके मन में कभी भी आचार्य के प्रति आदर का भाव नहीं रहा और उसी विद्यार्थी काल में आया जिद, उद्दंडता और बड़ों के प्रति अनादर का भाव जो आगे चलकर महाभारत के युद्ध का कारण बना । उस समय इस गुरुकुलीय शिक्षा को पुनः जीवित करते हुए स्वामी श्रद्धानन्द ने शिक्षा यज्ञ में अपना सर्वस्व आहूत करते हुए सफलतापूर्वक हरिद्वार, इन्द्रप्रस्थ, माटिन्डु आदि स्थानों पर गुरूकुल स्थापित किए और इतिहास साक्षी है कि इन गुरूकुलों ने शिक्षा संस्कार देकर स्वतन्त्रता संग्राम में अपने प्राणों की आहुति देने वाले कितने क्रान्तिकारी तैयार किए । लेकिन इस गुरूकुलीय शिक्षा प्रणाली को उस समय के नेताओं ने पुरानी धार्मिक कट्टरता वाली और प्रगति विरोधी मानकर खारिज कर दिया ।

दूसरी शिक्षा प्रणाली जो शायद समय के अनुकूल थी । महात्मा हन्सराज द्वारा नवीन और प्राचीन को जोड़कर बनाई गई एक अनूठे आन्दोलन के रूप में चलाई गई दयानन्द एंग्ले वैदिक शिक्षा व्यवस्था जिसे श्वेतवस्त्रधारी जीवन समर्पित करके चलाने वाले तपस्वी महात्मा हन्सराज ने स्थापित किया । जिसमें आधुनिकतम शिक्षा के साथ साथ महर्षि देव दयानन्द द्वारा दिए गए सत्य वैदिक आर्य सिद्धान्तों से भी छात्रों का परिचय करवाया जाता था ।

परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त शायद मानसिक गुलामी से पूरी तरह ना मुक्त हो पाने के कारण उस समय के नेताओं ने गुलामी की प्रतीक मैकाले की शिक्षा व्यवस्था को अपना लिया । बच्चों के मन कोमल संवेदनशील कच्ची उर्वर मिट्टी की तरह होते हैं । उनमें जैसे बीज बो दिए जाएं बड़े होकर वैसे ही बन जाते हैं । आज की शिक्षा व्यवस्था द्वारा हमने बच्चों को केवल पाश्चात्य भोगवाद की प्रेरणा दी और किसी भी के कोई संस्कार नहीं दिए । आज वही पीढ़ी युवा अवस्था में संस्कार विहीन होकर अपराधों की तरफ विशेष रूप से भोगवाद में फंसकर नारी को भोग की वस्तु मानकर बलात्कार सरीखे अत्याचार कर रहे हैं तो हम बड़ी-बड़ी बहस करते हैं और कानून व्यवस्था के लिए एक दूसरे पर दोषारोपण करते हुए राजनीति करते हैं । पर हमारा ध्यान इस बीमारी के मूल यानि दोषी शिक्षा व्यवस्था पर नहीं जाता बल्कि उसका तो हम और अधिक व्यवसायीकरण करते जा रहे हैं । हम आज अपने बच्चो को बड़े-बड़े डोनेशन देकर उच्च शिक्षा इसलिए दिलवाते हैं कि वह बड़ा होकर किसी बहु राष्ट्रीय निगम में मोटा पैकेज लेगा । हम भी एक व्यापारी की तरह बच्चों की शिक्षा में व्यवसाय की तरह इनवेस्ट करते हैं और फिर रिटर्न की आशा करते हैं । हमने खुद भी कभी बच्चों को शिक्षा में संस्कार देने का प्रयास नहीं किया लेकिन अब भी यदि हम जाग जाएं और इन सभी बुराइयों की जड़ वर्तमान शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन करते हुए यदि नैतिक एवं धर्म शिक्षा को भी शामिल कर ले तो निश्चित रूप से बच्चों को संस्कारवान बना

-शेष पृ. १५ पर

वेद में भक्ति-रस

-पं. भद्रसेन

वेदों के सम्बन्ध में जहाँ लोगों के मनों में अन्य कई प्रकार की भ्रान्तियाँ तथा विपरीत धारणाएँ हैं, वहाँ एक यह भी विपरीत धारणा है कि वेदों में भक्ति का इतना उत्कृष्ट वर्णन नहीं, जितना कि होना चाहिए। जैसी अन्य सन्तों की वाणियों तथा गीता आदि ग्रन्थों में भक्ति-रस की प्रधानता है, वैसी वेदों में नहीं। इतना ही नहीं प्रत्युत वेदों में उच्च कोटि के भक्ति-रस का अभाव ही है। जो भक्ति-रस का स्त्रोत कबीर, नानक आदि सन्तों और भक्त ने बहाया है, उस भक्ति-रस के स्त्रोत की प्राप्ति वेदों में नहीं मिलती। यदि कुछ उपासना-काण्ड का वर्णन वेदों में है भी, तो उसमें भक्ति की वह मञ्जुल धारा नहीं बहती, जो मध्य कालीन सन्तों और भक्तों ने बहाई है। इत्यादि।

वास्तव में यह आक्षेप उन लोगों का है, जो वेदों को श्रद्धा की दृष्टि से न देख कर केवल आलोचना की दृष्टि से देखते हैं। वे लोग यदि वेदों को भी उसी श्रद्धा और भक्ति की भावना से देखें, जिस भावना से वे सन्त साहित्य को देखते हैं, तो मेरा विश्वास है कि उन्हें वेदों में उससे भी उत्कृष्ट भक्ति-रस का पावन स्त्रोत बहता दिखलाई देगा। भला जिन वेदों में एक पूरा वेद केवल उपासना काण्ड की ही प्रधानता से वर्णन करता हो, फिर उनमें भक्ति रस का अभाव हो, वह कैसा सम्भव हो सकता है ?

अब हम अपने प्रेमी पाठकों को कुछ वैदिक प्रभु-भक्ति के पावन रस का पान कराएंगे। आशा है भक्तजन इस भक्ति रस का पानकर अपने को कृतकृत्य करेंगे। सर्व प्रथम वैदिक भक्तिरस का क्या स्वरूप है, इस सम्बन्ध में हम कुछ लिखेंगे। नारद-भक्ति-सूत्रों में भक्ति का निम्न लक्षण किया गया है-

''भक्तिरीश्वरे परानुरक्तिः''

अर्थात् भगवान् में एक भक्त का परम-अनुराग होना ही सच्ची भक्ति है। भक्त प्रभुदर्शन के लिए व्याकुल हो जाए, उसके दिव्य दर्शनों के बिना वह विह्वल हो उठे और भक्त तुकाराम के शब्दों में वह कहने लगे-

'केव्हां येसिरे विठोबा, आतां येई रे विठोबा'।

हे प्रभो ! तुम कब आओगे, अब तो आओ, जल्दी आओ, देर न लगाओ !

इस प्रकार प्रभु के मधुर मिलन के लिए वह अधीर होजाए। यही भक्ति की पराकाष्ठा है। इसी को सन्तों ने परा भक्ति के नाम से पुकारा है। अब जरा वेद में इस पराभक्ति की भव्य भावना को देखिए ! किस प्रकार भक्त व्याकुल होकर भगवान् को पुकारते हैं-

कदाचन स्तरीरसि नेन्द्र अश्चसि दाशुषे । उपोपेन्नु मघवन् भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते ॥ -य.३।३४॥

प्रभो ! कब तुम मुझ अपने भक्त को अपनी प्रेममई गोदी में बिठाओगे। हे इन्द्र ! क्या तुम अपना सर्वस्व अर्पण करने वाले मुझ भक्त के पास नहीं आओगे ? हे अपने भक्त पर सुख की वर्षा करने वाले देवाधिदेव ! तेरे बहुत दान सुने जाते हैं। तो क्या अपने भक्त को अपने दिव्यदर्शनों का दान नहीं दोगे ?

इस मन्त्र में भक्त व्याकुल होकर कहता है-प्रभो ! तुम तो स्तरी हो, अर्थात् सब प्रकार के सुखों से आच्छादन करने वाली माता की प्रेममई गोदी हो। तो क्या अपने भक्त के लिए माता की प्रेममई गोदी न बनोगे। प्रभो ! मैने तो आपके मधुर मिलन के लिए अपना सब कुछ आपको अर्पण कर दिया है। यह मन और तन भी अपना नहीं रहा। क्या फिर भी तुम मेरे अत्यन्त निकट आकर अपना दर्शन न दोगे ? तेरे तो असंख्य दान सुने जाते हैं। तेरे दानों की महिमा का कोई पार नहीं। सुना है तेरे दरबार से कोई खाली हाथ लौट कर नहीं आता। फिर अपने भक्त को, जो तुझ से और कुछ नहीं मांगता, अपने दिव्यदर्शनों का दान नहीं दोगे। क्या इस भक्त को अपने दर्शनों के बिना तरसाते ही रहोगे। क्या तेरा यह अनन्य भक्त तेरे द्वार पर आकर तेरे दर्शन के बिना खाली हाथ ही लौट जाएगा।

पाठक देखें ! वेद ने प्रभु की पराभक्ति अर्थात् परम अनुरक्ति का कैसा सुन्दर स्वरूप दर्शाया है। कैसा भक्तिरस का मर्मस्पर्शी वर्णन है। क्या ईश्वर में परम अनुरक्ति रूप भक्ति का इससे बढ़कर अन्यत्र कहीं वर्णन मिलेगा ?

प्रायः भक्तजन भगवान् की पराभक्ति पर प्रकाश डालते हुए, उसके दिग्दर्शनार्थ, उदाहरण के रूप में भक्तवर सुन्दर दास के निम्न उद्गारों का उल्लेख किया करते हैं-

''प्रेम लाग्यो जब ईश्वर सौं, तब भूल गयो सिगरो घर बारा।

ज्यों उन्मत्त फिरै इत ही तित नेकु रही न शरीर सम्भारा।''

अब जरा भगवान् के प्रति भक्त के इन्हीं उद्गारों को वेद में देखिए-

उत स्वया तन्वा संवदे, तत्कादान्वन्तर्वरुणे भुवानि ।
किं मे हव्यमहृणानो जुषेत, कदा मृळीकं सुमना अभिख्यम् -ऋ. ७।८६।२॥

''प्रभो ! वह दिन कब आएगा, जब मैं तेरी प्रेममई गोद में बिठाओगे। हे इन्द्र ! क्या तुम अपना सर्वस्व अर्पण करने वाले मुझ भक्त के पास नहीं आओगे ? हे अपने भक्त पर सुख की वर्षा करने वाले देवाधिदेव ! तेरे तो बहुत दान सुने जाते हैं। तो क्या अपने भक्त को अपने दिव्यदर्शनों का दान नहीं दोगे ?

इस मन्त्र में भक्त व्याकुल होकर कहता है-प्रभो ! तुम तो स्तरी हो, अर्थात् सब प्रकार के सुखों से आच्छादन करने वाली माता की प्रेममयी गोदी हो। तो क्या अपने भक्त के लिए माता की प्रेममई गोदी न बनोगे। प्रभो ! मैंने तो आपके मधुर मिलन के लिए अपना सब कुछ आपको अर्पण कर दिया है। यह मन और तन भी अपना नहीं

रहा। क्या फिर भी तुम मेरे अत्यन्त निकट आकर अपना दर्शन न दोगे ? तेरे तो असंख्य दान सुने जाते हैं। तेरे दानों की महिमा का कोई पार नहीं। सुना है तेरे दरबार से कोई खाली हाथ लौट कर नहीं आता। फिर अपने भक्त को, जो तुझ से और कुछ नहीं मांगता, अपने दिव्यदर्शनों का दान नहीं दोगे। क्या इस भक्त को अपने दर्शनों के बिना तरसाते ही रहोगे। क्या तेरा यह अन्य भक्त तेरे द्वार पर आकर तेरे दर्शन के बिना खाली हाथ ही लौट जाएगा ?

पाठक देखें! वेद ने प्रभु की पराभक्ति अर्थात् परम अनुरक्ति का कैसा सुन्दर स्वरूप दर्शाया है। कैसा भक्तिरस का मर्म स्पर्शी वर्णन है। क्या ईश्वर में परम अनुरक्ति रूप भक्ति का इससे बढ़कर अन्यत्र कहीं वर्णन मिलेगा ?

प्रायः भक्तजन भगवान् की पराभक्ति पर प्रकाश डालते हुए, उसके दिग्दर्शनार्थ, उदाहरण के रूप में भक्तवर सुन्दर दास के निम्न उद्‌गारों का उल्लेख किया करते हैं-

"प्रेम लाग्यो जब ईश्व सौं, तब भूल गयो सिगरो घर बारा।

ज्यों उन्मत्त फिरै इत ही तित नेकु रही न शरीर-सम्भारा।"

अब जरा भगवान् के प्रति भक्त के इन्हीं उद्‌गारों को वेद में देखिए-

उत स्वया तन्वा संवदे, तत्कदान्वन्तर्वरुणे भुवानि।
किं मे हव्यमहणानो जुषेत, कदा मृळीकं सुमना अभिख्यम्॥ -ऋ. ७।८६।२॥

"प्रभो! वह दिन कब आएगा, जब मैं तेरी प्रेममई गोद में बैठकर तुझसे वार्तालाप करूँगा। हे वरुण! कब मैं तेरे दिव्य स्वरूप में इतना तवलीन हो जाऊँगा, कि अपनी सुध-बुध तक भूल जाऊंगा। कब आप मेरे हृदय मन्दिर में स्वयं पधार कर निःशंक रूप से अपने भक्त की भक्तिमई भेंटे स्वीकार करोगे"। क्या भक्त सुन्दर दास के उपर्युक्त पद से बढ़ कर इस मन्त्र में भक्त की तन्मयता और तल्लीनता का सुन्दर वर्णन नहीं ?

जहाँ अन्य सूफी आदि भक्तों ने भक्ति के नशे को शराब की उपमा दी है, वहाँ वेद में भक्ति-रस को सोमरस के नाम से पुकारा गया है-अर्थात् जिस प्रकार सोमरस का पान एक सात्विक मस्ती लाता है, उसे पान करने पर सब आधि-व्याधियां नष्ट हो जाती हैं, शोक और चिन्ताएं दूर होकर एक अपूर्व सुख और शान्ति का अनुभव होता है, उसी प्रकार परमात्म-भक्ति के पालन रस का पान करने पर भी भक्त एक अलौकि परम सात्विक मस्ती का अनुभव करता है। उसकी सब आधि-व्याधियां सदा के लिए नष्ट हो जाती हैं। उस पावन रस का पानकर भक्त दुःख द्वन्द्वों से तथा सफल चिन्ताओं से मुक्त होकर उस शाश्वत शान्ति तथा आनन्द को प्राप्त कर लेता है।

सम्भवतः पाठक पूछेंगे कि यह कैसे पता लगे किवेद में प्रभु के प्रेमरस को भी सोमरस के नाम से कहा गया है। इस सम्बन्ध में हम अपनी ओर से कुछ न कहकर वेद की ही साक्षी पाठकों के सम्मुख रखेंगे। वेद में स्वयं दोनों प्रकार के सोमरसों का भेद स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है। वेद कहता है-सांसारिक सोमरस को तो सभी जानते और सेवन करते हैं, किन्तु उस भक्ति रूपी दिव्य सोमरस का आस्वादन साधारण मनुष्य नहीं कर सकते। उस रसका आस्वादन तो प्रभु के प्यारे भक्तजन ही किया करते हैं। जैसा कि वेद में कहा है-

सोमं मन्यते पपिवा यत् सं पिंषन्त्योषधिम्।
सोमं यं ब्रह्माणो विदुर्न तस्याश्नाति कश्चन॥

-ऋ. १०।८५।३॥

अर्थात् साधारण सोमरस पीने वाला मनुष्य उसको ही सोमरस समझता है, जो कि सोमवल्ली आदि औषधियों को कूटपीस कर तैयार किया जाता है। किन्तु जिस प्रभु-भक्ति-रूपी सोमरस को प्रभु के अनन्य भक्त ब्रह्मज्ञानी जन जानते और प्राप्त करते हैं, उस दिव्य सोमरस का कोई साधारण मनुष्य आस्वादन नहीं कर सकता। उस का रसास्वादन तो प्रभु के प्यारे भक्तजन ही किया करते हैं।

अब जरा उस दिव्य सोमरस का वेद के शब्दों में वर्णन सुनिए-प्रभु-प्रेम के नशे का वर्णन करते हुए उपदेष्य लोग भक्तवर-नानक के इस वचन को बड़े प्रेम से मग्न होकर श्रोताजनों को सुनाया करते हैं-

माड़ा नशा शराबदा जो उतर जाए प्रभात।
नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन रात॥

अब जरा प्रभु-प्रेम के इस पावन नशे को वेद के शब्दों में सुनिए-

स्वादुः किलायं मधुमां उतायं तीव्रः किलायं रसवाँ उतायम्।
उतो न्वस्य पपिवांसमिन्द्रं न कश्चन कहते आहवेषु॥ -ऋ. ६।४९।१

वेद कहता है-हे भक्तजनों! सुनो, वह प्रभु का प्रेम रस अत्यन्त स्वादु है। अत्यन्त मधुर है। इतना मधुर कि जिस के स्वाद और माधुर्य का कोई पार नहीं। जिस के सम्मुख दुनिया के सारे नशे फीके पड़ जाते हैं। वह प्रेम रस केवल स्वादु और मधुर ही नहीं, प्रत्युत अत्यन्त तीव्र अर्थात् तेज भी है। इतना तेज़ कि जो एक बार चढ़ जाए तो फिर उतरता ही नहीं, और है वह परम रसीला। जिसकी एक बून्द भी भक्त के नीरस हृदय को परम रसीला बना देती है और दुनिया के सारे रस उसके सम्मुख नीरस पड़ जाते हैं। जो प्रभु का प्यारा इन्द्र-आत्मा उसका पान कर लेता है, वह अजेय बन जाता है। संसार में कोई भी उसे जीत नहीं सकता। इस जीवन-संग्राम में प्रभु प्रेम रस पान द्वारा प्राप्त हुए भक्त के ब्रह्म तेज को कोई सहन नहीं कर सकता। मित्र और शत्रु, देव और दानव सभी उस ब्रह्म-तेज के सम्मुख नत-मस्तक हो जाते हैं।

प्रिय पाठक देखें! वेद ने प्रभु प्रेम के उस पावन रस का कितना मार्मिक वर्णन किया है। गुरु नानक साहब ने तो प्रभु-प्रेम के नशे के एक गुण या अङ्ग का ही वर्णन किया है, किन्तु वेद में इस दिव्य नशे के सब गुणों का कैसा सर्वाङ्गीण सुन्दर वर्णन किया गया है। और उस दिव्य नशे के पान करने वाले की क्या दशा होजाती है, यह भी साथ ही दर्शा दिया है। इसीलिए तो भक्त जन भगवानों से सदैव यही याचना करते हैं-

स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया।

-ऋ. ९।१।१॥

हे प्रियतम! तू सदैव अपने प्रेम रस की परम स्वादु और परम नशीली पावन धारा से हमारे जीवन को पवित्र किया कर। हम

ओ३म्

आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र.-तेलंगाना के चुनाव दिसम्बर २०२३ - जनवरी २०२४

आर्य प्रतिनिधि सभा ऑ.प्र. - तेलंगाना (संयुक्त आँध्र प्रदेश अर्थात आन्ध्र व तेलंगाना प्रांत) के जुलाई-अगस्त 2024-26 में होनेवाले चुनाव के संदर्भ में आर्य समाज की ओर से आर्य समाज द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों के आवेदन पत्र जमा करवाने के संदर्भ में दिया गया विवरण ।

आर्य समाज

____

गाँव ______________________

मण्डल ______________________

जिला ______________________

पिन कोड ______________________

मोबाईल नं. ______________________

वॉट्सएप नं. ______________________

ई-मेल ______________________

तेलंगाना राज्य / आन्ध्र प्रदेश

आर्य समाज------------------------- मंडल ------------------------- जिला -------------------------

१) आर्य समाज का पता ---

---फोन नं.-----------------------

श्रीमान प्रधानजी/मंत्री जी, दि.---------------

आर्य प्रतिनिधि सभा, आंध्र प्रदेश

(आ.प्र.- तेलंगाना, हैदराबाद), सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद । नमस्ते

महोदय,

नवेदन है कि हमारी आर्य समाज में कुल सभासदों की संख्याः -------------------------- है।

आर्य समाज --------------------- का साधारण अधिवेशन दिनांक ---------- के दिन आर्य समाज की नई कार्यकारिणी के निर्वाचन हेतु आयोजित किया गया । आयोजित साधारण अधिवेशन में आर्य समाज के लिए अधिकारियों, अंतरंग सदस्यों सहित आर्य प्रतिनिधि सभा, आंध्र प्रदेश (आ.प्र.- तेलंगाना, हैदराबाद) के लिए प्रतिनिधियों का निर्वाचन किया गया। निम्न लिखित महानुभाव हमारी समाज की ओर से सभा के लिए प्रतिनिधि निर्वाचित हुए हैं । इनकी आयु २५ वर्ष से कम नहीं है। इनका प्रतिनिधित्व स्वीकार करने की प्रार्थना है ।

१) श्री ------------------------------पिता का नाम --------------------------आयु -----**प्रतिनिधि के हस्ताक्षर** ---

प्रतिनिधि का पता ---मोबाईल नं. -------------------

२) श्री ------------------------------पिता का नाम --------------------------आयु -----**प्रतिनिधि के हस्ताक्षर** ---

प्रतिनिधि का पता ---मोबाईल नं. -------------------

३) श्री ------------------------------पिता का नाम --------------------------आयु -----**प्रतिनिधि के हस्ताक्षर** ---

प्रतिनिधि का पता ---मोबाईल नं. -------------------

४) श्री ------------------------------पिता का नाम --------------------------आयु -----**प्रतिनिधि के हस्ताक्षर** ---

प्रतिनिधि का पता ---मोबाईल नं. -------------------

५) श्री ------------------------------पिता का नाम --------------------------आयु -----**प्रतिनिधि के हस्ताक्षर** ---

प्रतिनिधि का पता ---मोबाईल नं. -------------------

मंत्री प्रधान

आर्य समाज के द्वारा प्रतिज्ञा पत्र

१) यह आर्य समाज इस बात की प्रतिज्ञा करता है कि वह आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश के नियमोपनियम संख्या धारा १- (ख), (ग), च, छ, धारा ११ (च), (छ) धारा १६, धारा ४६, धारा ४७, (ख), (घ) धारा ४९ उपनियम धारा (२) आदि को विशेष रूप से एवं समस्त धाराओं को मानेगा तथा आज्ञाओं के विरुद्ध अपने यहाँ कोई कार्यवाही न होने देगा तथा जो नियम आर्य समाज के लिए समय-समय पर सभा बनाएगी, उनका यह समाज पालन करेगा और सभा द्वारा नियत शुल्क दिया करेगा।

२) सभा के नियमोपनियमं के विरुद्ध कार्य करने पर, हिसाब ठीक-ठाक न रखने एवं न बताने पर सभा को अधिकार होगा कि समाज को भंग कर तदर्थ समिति बनाएँ या समस्त सम्पत्ति के साथ अपने स्वाधीन कर लें। सभा द्वारा समाज की सम्पत्ति के साथ अपने स्वाधीन कर लें। सभा द्वारा समाज की सम्पत्ति को अपने स्वाधीन करने की कार्यवाही को कानूनून भी वैध माना जायेगा।

हम लोग प्रतिज्ञा करते हैं कि इस चित्र में जो लिखा है, वह ठीक है।

हस्ताक्षर प्रधान समाज   हस्ताक्षर कोषाध्यक्ष   हस्ताक्षर मन्त्री समाज

आर्य समाज ----------------------------------

निर्वाचित प्रतिनिधि का प्रतिज्ञा-पत्र

मैं हृदयपूर्वक प्रतिज्ञा करता हूँ कि आर्य समाज के उपनियम धारा ४ उप धारा ख के अनुसार आचार-अनाचार तथा भक्ष्याभक्ष्य के नियमों का पालन करूँगा। साथ ही यह भी प्रतिज्ञा करता हूँ कि सभा के अनुशासन को भंग न करता हुआ सभा की रीति-नीति का ही प्रचार करूँगा और सभा के समस्त नियमोपनियमों का पालन करूँगा। अगर मुझ में किसी प्रकार का दोष पावें और लिखित प्रमाण उपस्थित किया गया तो मेरे प्रतिनिधित्व को अस्वीकार या रद्द किया जा सकता है।

(प्रतिनिधि के हस्ताक्षर) -------------------------------- **(प्रतिनिधि के हस्ताक्षर)**--------------------------------

(प्रतिनिधि के हस्ताक्षर) -------------------------------- **(प्रतिनिधि के हस्ताक्षर)**--------------------------------

(प्रतिनिधि के हस्ताक्षर)----------------------------

आर्य समाज ----------------------------

आर्य समाज ———————— के सभासदों की सूचि

संख्या	नाम	आयु
१)		
२)		
३)		
४)		
५)		
६)		
७)		
८)		
९)		

संख्या	नाम	आयु
१०)		
११)		
१२)		
१३)		
१४)		
१५)		
१६)		
१७)		
१८)		
१९)		
२०)		
२१)		
२२)		
२३)		
२४)		
२५)		
२६)		
२७)		
२८)		
२९)		

मंत्री   प्रधान

आर्य समाज --

नोट : आवश्यकतानुसार इस पन्ने की जेरॉक्स प्रति बनवाकर जोडें।

आर्य समाज ———————— के सभासदों की सूचि

संख्या	नाम	आयु	संख्या	नाम	आयु
३०)			५०)		
३१)			५१)		
३२)			५२)		
३३)			५३)		
३४)			५४)		
३५)			५५)		
३६)			५६)		
३७)			५७)		
३८)			५८)		
३९)			५९)		
४०)			६०)		
४१)			६१)		
४२)			६२)		
४३)			६३)		
४४)			६४)		
४५)			६५)		
४६)			६६)		
४७)			६७)		
४८)			६८)		
४९)			६९)		

मंत्री　　　　　　　　　　प्रधान

आर्य समाज ------------------------------------

नोट : आवश्यकतानुसार इस पन्ने की जेरॉक्स प्रति बनवाकर जोडें।

आर्य समाज ----------------------

के सभासदों की सूचि

संख्या	नाम	आयु
७०)		
७१)		
७२)		
७३)		
७४)		
७५)		
७६)		
७७)		
७८)		
७९)		
८०)		
८१)		
८२)		
८३)		
८४)		
८५)		
८६)		
८७)		
८८)		
८९)		

मंत्री प्रधान

आर्य समाज --

आर्य समाज ----------------------

मंडल --जिला

-----------------------------------का

समाज की सम्पत्ति आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश के नाम करने तथा सभा के अनुशासन में रहने का

शपथ पत्र (AFFIDAVIT)

आर्य समाज———————की अचल सम्पत्ति निम्न लिखित है। जो मुनसिपल ग्राम पंचायत में आर्य समाज के नाम से अंकित है। तथा आर्य समाज के नाम आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश के नाम रजिस्टर्ड है /नही है ——————————— **दिनांक :** ——————— को आयोजित आर्य समाज की यह साधारण सभा सर्वानुमति से प्रस्ताव पारित करती है कि यह समाज, आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश, सुल्तान बाजार, हैदराबाद के अंतर्गत है तथा उसी के अनुशासन में रहेगी। अनुबंधित संस्था होने के नाते इसकी समस्त अचल सम्पति की अधिकारीणि (ownership right) आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश को रहेगा। घोषित-अघोषित समस्त चल-अचल सम्पति की मालिक सभा ही रहेगी तथा विवाद के समय भी अंतिम निर्णय सभा का ही रहेगा जो कानुनन वैध माना जयेगा।

हम लोग प्रतिज्ञा करते है कि प्रस्ताव तथा चित्र में जो कुछ लिखा व दिखाया गया है वह ठीक है तथा न दिखाई गई समाज की समस्त चल-अचल सम्पति पर भी सभा को ही मालकीयत का (ownership right) अधिकार रहेगा ।

यह समाज सभा की धारा १०, ११, १२, १३, १४, १६, ४६, ४७, ४८, ४९, ५६, ५७, ५८, उपनियम धारा (२) आदि को विशेष एवं समस्त धाराओं को मानेगा तथा सभा की आज्ञाओं के विरूद्ध अपने यहां कोई कार्यवाही न होने देगा तथा जो नियम आर्य समाज के लिए समय-समय पर सभा बनाएगी, उनका यह समाज पालन करेगा और सभा द्वारा नियत शुल्क दिया करेगा।

सभा के नियमोपनियम के विरुद्ध कार्य करने पर हिसाब ठीक-ठाक न रखने एवं न बताने पर सभा को अधिकार रहेगा कि समाज को भंग कर तदर्थ समिति बनाए या समस्त सम्पति के साथ समाज को अपने स्वाधिन कर लें। सभा द्वारा समाज की सम्पति को अपने स्वाधीन करने की कार्यवाही को कानूनन वैध माना जायेगा। जिसे हम स्वीकार करते है ।

प्रधान कोषाध्यक्ष मंत्री

..पृ. ४का शेष

सदा तेरे प्रेम-रस का ही पान करने वाले हों। प्रभो! जहाँ संसार के सब नशे हेय और त्याज्य हैं, वहां तेरा दिव्य नशा तो हमारे जीवन का उत्थान करने वाला है, उसे उच्च और महान् बनाने वाला है। इसलिए हे नाथ!

यस्ते भदो वरेण्यः। -साम. पू.५।२॥

जो यह तेरा 'वरेण्य' अर्थात् वरण करने योग्य भक्ति-रस-रूपी मद अर्थात् नशा है, हमें तो सदा उसका ही पान करा। वास्तव में जिन भक्त को उस प्रभु-प्रेम के पावन रस का एक बार भी स्वाद आ जाता है, फिर वे कभी भी उसका परित्याग नहीं करते। वे तो वेद के शब्दों में-

सिञ्चन्ति परिषिञ्चन्ति, उत्सिञ्चन्ति पुनन्ति च। -यजु. २०।२८॥

उस पावन रस से सदैव अपने को सीन्चा करते हैं। चारों तरफ से सीन्चते हैं। और भली प्रकार से सीन्चते हैं, और आनन्द विभोर होकर प्रभु के गुणों का गान गाने लगते हैं। वे प्रभु-गुण-गान में इतने मस्त होजाते हैं कि भक्त सुन्दर दास के कथानुसार अपनी सुध-बुध भी भूल जाते हैं। ऐसे प्रभु के अनन्य भक्तो के ऊपर ही-

स वृषा वृषभो भुवत् अ.॥

वह भगवान् मेघ बनकर सुखों की वर्षा करते हैं। फिर उस प्रभु के अनन्य भक्त को-

न घ्रंस्तताप न हिमोजघान प्र नमतां पृथिवी जीरदानुः।
आपश्चिदस्मै घ-तमित्क्षरन्ति यत्र सोम-सदमित् तत्र भद्रम्॥ अर्थ. ७।१८।२॥

न तो धूप तपाती है, न सर्दी सताती है। वह पृथिवी भी उसके लिए जीवन दान देने वाली बन-कर सदा सुखों की ही वर्षा कती है। ये कहती हुई जल धाराएँ भी उसके ऊपर मानों जल की नहीं प्रत्युत घृत की धाराएँ बनकर सुखों की वर्षा करती हैं। क्योंकि जहाँ प्रभुका प्रेम-रस है, वहाँ सदा कल्याण ही हुआ करता है, अकल्याण कभी नहीं।

वेद कहता है-जो भक्त अपने हृदय-मन्दिर में उत्पन्न उस प्रभु की प्रेम-रस-धारा के साथ सदा दौड़ लगाया करता के साथ सदा दौड़ लगाया करता है, उसमें लवलीन हो जाता है, वह इस भवसागर से तर जाता है। जन्म-मरण के बन्धन से पार हो जाता है। फिर उसे बारम्बार इस भवसागर में गोते नहीं खाने पड़ते। जैसा कि वेद में कहा है-

तरत् स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः।
तरत् स मन्दी धावति॥ -साम.५०।त्र.१।

इसीलिए तो ऋषि दयानन्द जैसे भक्त संसार के सुख भोगों पर लात मार कर सदा उसकी ही चाहना करते हुए वेद के शब्दों में कहते हैं-

इच्छन्ति त्वा सोम्यासः सखायः...।

हे प्रभो! सदा तेरे भक्ति-रूपी सोमरस का पान करने वाले तेरे परमसखा भक्त तेरी ही कामना करते हैं। तेरे दर्शनों की ही चाहना करते हैं। इसलिए हे प्रभो! अब तो-

वयं तव त्वमस्मयुर्भव॥

हम तेरे, तू हमारा बन जा। तू हमसे और हम तुझ से पल भर भी जुदा न हों। क्योंकि-

वयं सोम व्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः॥

प्रभो! आप के इस मधुर मिलन के लिए ही तो हम अपने तन में इस मन को धारण कर रहे हैं। अर्थात् इस मन द्वारा आपके भक्ति रस का पान कर आपके दिव्य दर्शनों को प्राप्त करना ही तो हमारे जीवन का परम लक्ष्य और महान् व्रत है।

अब वाचक वृन्द स्वयं विचार करें कि क्या भक्त शिरोमणि मीरा के-

"मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई"।

इस वाक्य से उपर्युक्त वेद वाक्यों में कम भक्ति रस की धारा बह रही है? मीरा कहती है-मेरे तो गिरधर गोपाल हैं। किन्तु वेद में भक्त कहते हैं-भगवन्! तू हमारा है, और हम तेरे हैं। तेरे मधुर मिलन के लिए ही हमने इस मन को अपने तन में धारण किया है। कैसी भक्त और भगवान् की तन्मयता है?

प्रभु-प्रेमी-जन देखें कि वेद ने भक्ति-रस की कैसी पावन धारा बहाई है। किस प्रकार भक्ति के सुन्दर स्वरूप का प्रदर्शन किया है। क्या हम श्री प्रभु की इस प्रेम रस धारा का पानकर अपने जीवनों को कृत कृत्य करेंगे? और भ्रान्त लोगों के इस भ्रम को दूर करने का प्रयत्न करेंगे, कि वेद में भक्ति रस की प्राधानता नहीं है।

सैनिक, भृत्यादि पक्ष में, पालक राजा के आज्ञा वचनों को लेकर जाना यही उनका कर्त्तव्य है।

सैनिक वीरों की गति की जो उपमा वेद ने दी है, वह भी समझने लायक है। जैसे आकाश में दूर-दूर तक के भागों तक और बड़े-बड़े पर्वत श्रृंगों के ऊपर से सारस आदि पक्षी श्रेणीबद्ध होकर जाते हैं, उसी प्रकार ये वीर श्रेणीबद्ध होकर (दिवः) आकाश और भूमि दोनों के बड़े-बड़े पर्वत भागों और दूर-दूर तक के प्रदेशों तक अपने पराक्रम से पहुँचें। (अश्वासः एषाम् उभए) इनके अश्व वेगवान् गमन साधन दोनों प्रकार के हों, जो भूमि, और आकाश दोनों मार्गों से जाने वाले हों, जिनसे आकाश के दूर-दूर भागों तक और पर्वतों के सिखरों तक पहुँचा जा सके। वे वीर पुरुष उनको (यथा विदुः) जैसे जानना चाहिए, वैसे उनको यथावत् जाने। उनको अपने गमन साधन विमानों और रथों के सम्बन्ध में सब जानकारी हो जिससे कि वे (पर्वतस्य) पालन करने वाले राष्ट्रकी (नभनून्) आज्ञाओं के पालनार्थ यथावत् (प्रअचुच्युवुः) जा सकें। आज्ञाओं का पालन कर सकें, या उनको यथा स्थान पहुँचा सकें।

लेख के प्रारम्भ में जो पृषतीः पद से सायण और श्री पं. सालवलेकर ने हरिणियां मृगियां ली हैं, उसके सम्बन्ध में किसी लेखान्तर में प्रकाश डालेंगे। यहां इतना कहना उचित है। वायुओं या मरुतों के सम्बन्ध में पृषती से (पृषु सेचने) जल सेचन, जल-वर्णण करने वाली गतियों या विशेष शक्तियों का ग्रहण करना चाहिए। और वीरों के पक्ष में पृषतीः, पृषद्-अश्वाः, पृश्निगावः, पृश्नयः, पृश्निमातरः इन सभी वेद-शब्दों पर विचार करना होगा।

...पृ. ६ का शेष.

पाएंगे और यही बच्चे कल के अच्छे आदर्श नागरिक बन कर राष्ट्र की मजबूत बुलन्द इमारत का आधार बनेंगे और जब हमारे नागरिक संस्कारवान और सम्भ्रान्त होंगे तो अपराध स्वतः कम हो जाएंगे और फिर नारी पर अत्याचार स्वतः समाप्त हो जाएंगे। कह भी जाता है यदि पहले सावधानी बरती जाए और बीमारी पैदा होने वाले कारणों को समाप्त कर दिया जाए तो निश्चित रूप से वह बीमारी नहीं होगी।

अब खेती करना आदि व्यवसाय-प्रकरण

-पं. शिवशङ्कर 'काव्यतीर्थ'

देश में प्रायः लोग समझते हैं कि खेती करना,लोहे से कुठारवाशी (बसुला) कुदाल आदि गढ़ना, काठ से हल, युग (जूआ), गाड़ी, रथादि तैयार करना, मिट्टी से अनेक बर्त्तन गढ़ना, काँसे, पीतल आदि से बर्तन बनाना, सूतों से कपड़ा बुनना, चमड़ों के विविध जूते वा वस्त्र वा युद्ध में पहनने के हेतु अनेक प्रकार के वर्म सीना और चमड़े के तन्तु से ज्या (प्रत्यञ्चा-धनुष की रस्सी) सुसज्जित करना, चक्की पीसना, अपने कार्य के लिए खाई, नहर, कूप, तालाब आदि खोदना, सड़क बाँधना आदि कर्म नीच पुरुषों के हैं और प्रत्यक्ष देखते हैं कि इन सब व्यवसायों के करनेवाले आज नीच-निकृष्ट अस्पृश्य माने जाते हैं तथा सभ्य समाज में वे किसी प्रकार से सम्मिलित नहीं किए जाते । ये परिश्रमशील पुरुष जिनके अधीन समाज का जीवन, शोभा, सुन्दरता है, अति घृणित और नीच बना दिए गए हैं । इनसे यज्ञोपवीत छीन लिया गया । कर्म करना निषेध किया गया । इस प्रकार ज्यों-ज्यों इनका सम्बन्ध उच्च वर्णों से छूटता गया, त्यों-त्यों ये गिरते गए । मद्यादि सेवन से, शौचादि के त्याग से और विद्या के अध्ययन-अध्यापन न होने से ये सब निःसन्देह आज बहुत नीचे गिरे हुए हैं । इनके कर्म, धर्म, देव, पितर, भजन, बैठना-उठना सभी उच्च वर्णों से भिन्न-भिन्न हो गए । मैं इस प्रकरण में आप लोगों को सुनाना चाहता हूँ कि कोई व्यवसाय वेदानुसार निकृष्ट नहीं है । ब्राह्मण, ऋत्विक्, राजा प्रभृति भी इन व्यवसायों को बड़े आनन्द से किया करते थे । आप यह समझें कि समाज की शोभा के निमित्त वा जीवन-निर्वाहार्थ जिन-जिन व्यवसायों की आवश्यकता थी उन्हें सब कुछ-न-कुछ अवश्य किया करते थे । विशेष कर ब्राह्मण और राजा को आज्ञा थी कि उन व्यवसायों को तुम कभी-कभी किया करो, जिससे साधारण प्रजाओं में घृणा न हो । एवमस्तु । अब आप वेदों की ऋचा सुकर स्वयं मीमांसा करें ।

राजकर्त्तव्य हलचालन

यवं वृकेणाश्विना वपन्तेषं दुहन्ता मनुषाय दस्त्रा ।
अभि दस्यु बकुरेणा धमन्तोरु **ज्योतिश्चक्रथुरार्याय** ॥ -ऋ. १।११७।२१

यवम् । वृकेण । अश्विना । वपन्ता । इषम् । दुहन्ता । मनुषाय । दस्त्रा । अभि । दस्युम् । बकुरेण । धमन्ता । उरू । ज्योतिः । चक्रथुः । आर्याय ।

दस्त्रा+अशिवना=हे दर्शनीय राजन् तथा मन्त्रिमन् ! आप दोनों **वृकेण**=लाङ्गल=खेती करने के कर्षक यन्त्र से **यवम्+वपन्ता**=यव जौ=अनेक प्रकार के अन्नों को बोते हुए और उस बुवाई से **इषम्+दुहन्ता**=अन्नों को पृथिवी से दुहते हुए तथा **बकुरेण**=बकुर नामक अस्त्र से **दस्युम्+अभि+धमन्ता**=दुष्टों का नाश करते हुए इस प्रकार इन तीन प्रकार के कर्मों से **आर्याय+मनुषा**=आर्य मनुष्य के लिए **उरु+ज्योतिः**=बहुत प्रकाश **चक्रथुः**=कर रहे हैं, इस हेतु आप दोनों परम प्रशंसनीय है ।

यास्क 'वकुरो भास्करों भयङ्करों भासमानो द्रवतीति वा' जो अस्त्र जलता हुआ दौड़े-जैसे बन्दूक, तोप आदि उसे बकुर कहते हैं । 'वृको लाङ्गलं भवति' 'लाङ्गल' का नाम यहाँ वृक है । निरुक्त ६।२५ और २६ ॥

निरुक्त में इस ऋचा का उदाहरण आया है । वृक नाम यहाँ हल के लाङ्गल का है । इसमें विस्पष्ट वर्णन है कि राजा और मन्त्री दोनों मिलकर कभी-कभी खेती करें, जिसे प्रजाएँ इस कर्म को नीच न समझें और इस व्यवसाय के करनेवाले भी निकृष्ट न माने जाएँ । कदाचित् आप कहेंगे कि यहाँ 'अश्विनौ' पद से देवता का ग्रहण होता है, राजा और मन्त्री का नहीं । सुनिए, 'अश्विनौ' किस-किसको कहते हैं- ''तत्काबशिवनौ द्यावापृथिव्याविल्येके अहोरात्राविल्येके सूर्याचन्द्रमसाविल्येके राजानौ पुण्यकृताविल्यैतिहासिकाः ।'' इस प्रमाण से सिद्ध है कि धर्मात्मा राजा और मन्त्री के जोड़े का भी नाम 'अश्विनौ' है और देवता भी शुभ-गुणं-सम्पन्न मनुष्य ही कहाते हैं । खेती करनेवाले को देवता की पदवी दी गई है । यह इनकी प्रशंसा है ।

दशस्यन्ता मनवे पूर्व्यं दिवि यवं वृकेण कर्षथः । ता वामद्य सुमतिभिः शुभस्पती अश्विना प्र स्तुवीमहि ॥ -ऋ. ८।२२।६

दिवि=द्युलोक में जैसे मनुष्य के सुख के लिए सूर्य-चन्द्र कार्य कर रहे हैं तद्वत् आप दोनों राजा और मन्त्री **मनवे**=मनुष्य के लिए **पूर्व्यम्**=नवीन वस्तु **दशस्यन्ता**=देते हुए **यवम**=जौ, अर्थात् सब प्रकार का धान्य **वृकेण**=लाङ्गल से **कर्षथः**=उत्पन्न करते हैं । इस हेतु **अश्विनौ**=हे राजन् तथा मन्त्रिन् ! **उद्य**=आज **शुभस्पती**=शुभ-कर्म के पालन करनेवाले अथवा जल के रक्षक **ता+वाम्=** आप दोनों को **सुमतिभिः**=शोभन-मति, अर्थात् स्तोत्रों से **प्रस्तुवीमहि**=हम लोग स्तुति करते हैं, अर्थात् आपके गुण गाते हैं ।

शुभः+पती=यहाँ राजा को जलों का रक्षक इस हेतु कहा गया है कि खेती जल से ही होती है । यदि जल का प्रबन्ध राजा न करे तो खेती होना कठिन है । राजपूताने और पञ्जाब आदि देश में आजकल भी जलार्थ राजाओं का बड़ा प्रबन्ध देखा जाता है । अन्यान्य कर्म के साथ किसानी भी राजा के लिए एक कर्त्तव्य कर्म विहित था । पौराणिक समय में भी जनक और पृथु महाराज आदि की कथा कर्षणवृत्ति राज कर्त्तव्य को सूचित करती है ।

कृष्टि और चर्षणि

मनुष्य के नाम में कृष्टि और चर्षणि ये दो नाम आते हैं 'कृष् विलेखने' धातु से ये दोनों शब्द बने हैं । पृथिवी को हलादि यन्त्र से चीरना-फाड़ना अर्थ 'कृष्' धातु का है । इसी अर्थ में इसके प्रयोग बहुत आते हैं । इसी हेतु खेत से जीनेवाले किसान के नाम आजकल कर्षक, कृषक और कृषीवल आते हैं (क्षेत्राजीवः कर्षकश्च कृषकश्च कृषीवलः ।

-अमर. २।९।६) । जब मनुष्य मात्र के नाम (निघण्टु २-३) कृष्टि और 'चर्षणि' है, तो क्या राजा और ब्राह्मण मनुष्य में नहीं हैं ?

कृषिकर्म-प्रचारार्थ आज्ञा

इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषानु यच्छतु । सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥

-ऋ. ४।५७।७

इन्द्रः=जो राजा हो वह **सीताम्+** निगृह्णातु=लाङ्गल को पकड़े और ताम्+ **अनु**=पीछे उस सीता को, अर्थात् हल-सम्बन्धी खेती क्रिया को **पूषा**=मन्त्री आदि **नि+यच्छतु** =नियम में चलावें **उत्तराम्+उत्तराम्+समाम्**= प्रत्येक आगामी वर्ष में । इस प्रकार **सा+पयस्वती+दुहाम्**=वह दूध देने वाली होवे ।

भाव यह है कि प्रथम, वर्ष के आरम्भ में कम-से-कम एक-आध दिन स्वयं राजा हल को पकड़कर चलावे । तत्पश्चात् मन्त्री आदि प्रबन्धकर्त्ता पुरुष प्रजाओं के बीच इस क्रिया को फैलाने के लिए पूरा यत्न करें । ऐसा न हो कि हल, बैल, बीज, पानी आदि के अभाव से खेती करना बन्द हो जाए । खेती से ही गाय, भैंस, बकरी, भेड़ी घास-भूसा खाती और दूधदेती हैं । मनुष्य मात्र का जीवन इसी के अधीन है, इस प्रकार खेती प्रत्येक वर्ष दूध देनेवाली हुआ करती है । इस ऋचा के द्वारा ईश्वर ने राजा को हल चलाने की आज्ञा देकर कृषिविद्या-प्रचारार्थ आज्ञा दी है ।

यदि कोई कहे कि इन्द्र नाम तो देवों के राजा का है । सुनिए मैं कह चुका हूँ कि 'देव' मनुष्य भी होते हैं और ऐसे-ऐसे स्थान में इन्द्र पद से 'राजेन्द्र' का ग्रहण होता है । जिस पक्ष में देवराज अभीष्ट है, उस पक्ष में भी कोई क्षति नहीं । जब देवराज खेती करते हैं, तो मनुष्य राजाओं की क्या गिनती है ? इससे तो खेती की और भी प्रशंसा होती है ।

खेती और जनक महाराज

अथ में कृषतः क्षेत्रं लाङ्गलादुत्थिता ततः । क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्ना सीतेति विश्रुता ।

-रामायण १।६६।१४

जनक महाराज स्वयं कहते हैं कि हल चलाते हुए मुझे यह सीता मिली, इस कथा का भाव जो कुछ हो, परन्तु राजा को हल चलाकर खेती करने का पता इससे अवश्य लगता है । यदि उस समय क्षेत्र कर्षण राजा को निषेध रहता तो ऐसा इतिहास कभी नहीं लिखा जाता, अतः 'सीता' यह नाम और सीता-जनक-चरित्र पूर्णतया दृढ़ करता है कि क्षेत्र-कर्षण और कुषीवल दोनों हीन नहीं माने जाते थे ।

खेती और महाराज पृथु

महाराज पृथु के चरित्र में यद्यपि बहुत अन्तर पड़ गया है और इसके साथ बहुत ही अत्युक्ति की गई है, परन्तु यह इतिहास सूचित करता है कि पृथिवी पर अन्न उत्पन्न करने के लिए राजा अनेक उपाय किया करते थे । कृषक, ब्राह्मण, राजा, प्रजा सब मिलकर खेतीविद्या की बढ़ती में तत्पर थे । भागवत चतुर्थ स्कन्ध सप्तदशाध्याय में लिखा है कि अन्न बिना भूकों मरती हुई प्रजाएँ पृथु के समीप आकर ज़ोर से चिल्ला उठीं कि आप हम सब की रक्षा करें, अन्न बिना हम सब मरती जाती हैं । तब पृथु महाराज धनुष-बाण ले पृथिवी के पीछे चले । पृथिवी वशीभूत हुई और उससे सारे खाद्य पदार्थ दुहे । भाव इसका केवल यह है कि खेती के लिए राजा-प्रजा, ऋषि-मुनि सभी उद्यत रहते थे ।

खेती और विद्वान् आचार्य आदि

सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक् । धीरा देवेषु सुम्नया ॥ -ऋ. १०।१०१।४

सीर=हल । **युग**=जूआ । **सुम्न**=सुख ।

धीराः=धीमान्-क्षेत्रविद्यावित् **कवयः**-कृषि-कर्म जाननेवाले विद्वान् **सीरा+युञ्जन्ति**=हल में बैल जोते हैं और **युगा**=युगों का **पृथक्+वितन्वते**=पृथक्-पृथक् विस्तार करते हैं । किस हेतु ? **देवेषु+सुम्नया**=मनुष्यों में सुख पहुँचाने के हेतु ।

युनक्त सीरा वि युगा तनुध्वं कृते योनौ वपतेह बीजम् ॥ -ऋ. १०।१०१।३

हे विद्वानो ! सीरा-युनक्त-हलों को बैलों से युक्त करो युगा-वितनुध्वम्-युगों का विस्तार करो । कृते योनौ वपत इह बीजम्-हल से तैयार खेत में बीज बोओ, इत्यादि अनेक ऋचाएँ विद्वान्, आचार्य, कवि, धीर प्रभृतियों को भी हल चलाने की आज्ञा देती हैं । पूर्व आचार्यों ने इसका अनुकरण भी किया है, यथा-

खेती और धौम्य ऋषि

महाभारत आदिपर्व तृतीयाध्याय में लिखा है कि धौम्य नामक एक ऋषि थे । उनके उपमन्यु, आरुणि और वेद तीन शिष्य थे । "स एकं शिष्यमारुणिपाञ्चाल्यं प्रेषयामास गच्छ केदार खण्डं बधानेति ।" -आदिपर्व ३।२४। उन्होंने एक शिष्य पाञ्चाल्य आरुणि से कहा कि जा खेत के पानी को बाँध आ, परन्तु वह वहाँ जाकर खेत न बाँध सका । इस हेतु पानी बहने के पनाले में पड़ रहा । गृह पर उसे न देख धौम्य ऋषि वहाँ जा शिष्य का चरित्र देख सति प्रसन्न हुए हैं । वह शिष्य आगे चलकर, 'उद्दालक' नाम से जगद् विख्यात हुआ । यह आख्यायि का धौम्य ऋषि का खेति करना सूचित करती है । इसके आगे कृषि-कर्म-सम्बन्धी एक सूक्त ही सुनाते हैं ।

ऋग्वेद ४।५७ सम्पूर्ण सूक्त

क्षेत्रस्य पतिना वयं हितेनेव जयामसि । गामश्वं पोषयित्न्वा स नो मृळातीदृशे ॥१॥

वामदेव ऋषि सबको उपदेश देते हैं कि हे मनुष्यों ! **वयम्**-हम सभी **हितेन+इव**=परम मित्र के समान **क्षेत्रस्य+पतिना**=खेत के स्वामी के साथ मिलकर ही **जयामसि**=विजय पाते हैं, तभी हम लोग प्रत्येक कार्य को करने में समर्थ होते हैं । **सः**=वह क्षेत्रपति **गाम्+ अश्वम्**=गौ, बैल और अश्व **पोषयिन्तु**= और पुष्टिकारक अन्यान्य पदार्थ **आ**=सब प्रकार से हम लोगों को पहुँचाते हैं, जिस हेतु **ईदृशे**=ऐसे-ऐसे कार्यों में खेति हर किसान **नः+मृळाति**=हमें सुख पहुँचाते हैं, इस कारण क्षेत्रपति सदा आदरणीय है ।

क्षेत्रस्य पते मधुमन्तमूर्मिं धेनुरिव पयो अस्मासु धुक्ष्व । मधुश्चुतं घृतमिव सुपूतमृतस्य नः पतयो मृळयन्तु ॥२॥

अब क्षेत्र पति की ओर देखकर वामदेव ऋषि कहते हैं कि **क्षेत्रस्य+पते**=हे क्षेत्र स्वामिन् ! **धेनुः+इव+पयः=**जैसे गौ दूध देती है वैसे ही **अस्मासु**=हम लोगों के निमित्त **मधुमन्तम्**=मीठी **ऊर्मिम्**=जलधारा **धुक्ष्व**= दुहो, अर्थात् मीटे जल के लिए भीउपाय किया करो, **मधुश्चुतम्+धृतम्+इव+सुपूतम्**=

मधुस्त्रावी पवित्र घृत के समान **ऋतस्य+पतयः**=खेत के स्वामी **नः**=हम लोगों के **मृळयन्तु**=सुख पहुँचाया करें ।

लधुमतीरोषधीर्द्याव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम् । क्षेत्रस्य पतिर्मधुमान्नो अस्त्वरिष्यन्तो अन्वेनं चरे ॥३॥

पृथिवी पर **ओषधीः**=जौ, गेहूँ, धान आदि अन्न **द्यावः**=द्युलोकस्थ सूर्यादि-पदार्थ और **आपः**=मेघस्थ जल ये सभी हमारे लिए **मधुमतीः**=मीठे होवें **नः**=हमारे लिए **अन्तरिक्षम्**=आकाशस्थ सभी पदार्थ **मधुमत्+भवतु**=मीठे होवें । **क्षेत्रस्य पतिः नः मधुमान् अस्तु**=क्षेत्रपति भी हमारे लिए मधुर स्वाभाव वाला होवे और हम लोग **अरिष्यन्तः**=किसी से द्रोह न करते हुए **एनम्+अनु+चरेम**=क्षेत्रपति का अनुकरण करें । जैसे किसा बड़ी शान्ति और धैर्य के साथ खेती करता है, उसी प्रकार हम लोग सब कार्य करें ।

शुनं वहाः शुनं नरःशुनं कृपतु लाङ्गलम् । शुनं वरत्रा बध्यन्ता शुनमष्ट्रामुदिङ्गय ॥४॥

वहाः=बैल **शुनम्**=सुख को प्राप्त होवें । **नरः**=खेती करने वाले मनुष्य **शुनम्**=सुख पावे **शुनम्+कृषतु+लाङ्गलम्**=खेतों में सुख से लाङ्गल चले । **शुनम्+वरत्राः**=सुखपूर्वक रस्सियाँ **बध्यन्ताम्**=बाँधी जाएँ । **अष्ट्राम्=** कुदाल आदि खेती करने की सामग्री को **शुनम्**=सुख से **उद्+इङ्गय**=चलाओ ।

शुनासीराविमां वाचं जुषेथां यद्दिवि चक्रथुः पयः । तेनेमामुप सिञ्चतम् ॥५॥

हे **शुनासीरौ**=सुख से खेती करने वाले नर-नारियो ! **इमाम् वाचम्**=इस उपदेशमयी वाणी को **जुषेथाम्**=प्रीतिपूर्वक सुनो । **यत्**=जिस **पयः**=जल को **शुनासीरौ**=सूर्य और वायु **दिवि**=आकाश में **चक्रथुः**=बनाते हैं **तेन**=उस से **इमाम्**=इस भूमि को सिञ्चतम्=सीन्चो ।

अर्वाची शुभगे भव सीते वन्दामहे त्वा । यथा नः सुभगासति यथा नः सुफलासति ॥६॥

शुभगे+सीते=हे सुभगे हल-सामग्री ! तुम **अर्वाची+भव**=पृथिवी के नीचे चलने वाली होओ । हम **त्वा+वन्दामहे**=तेरी कामना करते हैं **यथा**=जैसे तू **नः**=हमारे लिए **सुभगा+असति**=सुभगा है और **यथा+नः**=जैसे हमारे लिए **सुफला**=अच्छे-अच्छे फल देनेवाली **असति**=है, वैसी हीसदा बनी रहो ।

इन्द्रः सीतां निगृह्णातु तां पूषानु यच्छतु । सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥७॥

इन्द्रः=राजा **सीताम्+नि+गृह्णातु**=हल के लाङ्गल को पकड़कर चले **ताम्+अनु**=उसके पीछे **पूषा**=पोषणकर्त्ता उसका मन्त्री **यच्छतु**=चलावे, अर्थात् राजा सीता, अर्थात् कृषि विद्या को खूब फैलावे और उसके मन्त्री आदि भी इसी का अनुकरण करें, जिससे कि **सा**=वह खेती **नः+पयस्वती+दुहाम्**=हम लोगों को दूध देनेवाली हो **उत्तराम्+उत्तराम्+समाम्**=आगे आनेवाले वर्षों में वह हमें सुख देनेवाली होवे ।

शुनं नः फाला वि कृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभि यन्तु बाहैः । शुनं पर्जन्यो मधुना पयोभिः शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तम् ॥८॥

नः=हम लोगों के लिए **फालाः**=लोहे से बनाई हुई भूमि खोदने के लिए फाल **शुनम्**=अच्छे प्रकार **भूमिम्**=भूमि को **विकृषन्तु**=चीड़ फाड़ करें **कीनाशाः**=खेतिहर लोग **बाहैः**=बैलों के द्वारा **अभि+यन्तु**=खेती के सब काम करें **पर्जन्यः**=मेघ **मधुना+पयोभिः**=मधुरता से युक्त जल को **शुनम्**=सुख से बरसावे **शुनासीरौ**=सूर्य और वायु **अस्मासु**=हमारे निमित्त **शुनम्+धत्तम्**=सुख पहुँचावें ॥८॥

कृषि-कर्म-सम्बन्धी मैंने अनेक ऋचाएँ यहाँ सुनाई हैं । मैं देखता हूँ हलग्राही पुरुष देश में अतिनिकृष्ट समझे जाते हैं । मिथिला देश में द्विज यदि अपने हाथ से हल चलावें तो वे जाति से निष्कासित हो जाएँ । वे खेत के सब काम करेंगे, दिनभर खेत खोदेंगे, निरोनी करेंगे । काटना, बोना, दबाना, खलियाना आदि में वे अपना सम्मपूर्ण समय लगावेंगे, परन्तु अपने हाथ से हल नहीं चला सकते । इतना मैं अवश्य कहूँगा कि इन कामों में सदा लिप्त रहने से मनुष्य नीच बन जाता है, परन्तु क्या केवल हल न छूने से कोई ब्राह्मण बना रह सकता है ? नहीं । हल चलाने से क्या होता है ? बात यह है कि पठन-पाठन, स्वाध्याय आदि सब शुभ कर्मों को छोड़ रात-दिन केवल भूमि के खोदने में लगा रहना सर्वथा अनुचित है । खेती करवानी अवश्य चाहिए । तिरहुत में अभी तक एक विधि चली आती है कि माघ शुक्ल पञ्चमी को ब्राह्मण लोग भी अढ़ाई मोर (हलाई ।) हल स्वयं अपने हाथ से चलाते हैं । यह सूचित करता है कि हल चलाना अनुचित नहीं है ।

चीन देश का राजा और हल चलाना

"चीन देश में कृषि के काम का बड़ा आदर-सम्मान किया जाता है । पीकिङ्ग नगर के समीप एक विशेष खेत है, जहाँ बरस में एक बार महाराज और प्रधान लोग इकट्ठे होकर बड़ा त्योहार मनाते हैं । एक बहुत विभूषित हल महाराज के हाथ में दिया जाता है, जिसके द्वारा वह तीन कुड़ बनाता है और प्रत्येक राजकुमार पाँच और बड़े-बड़े राजमन्त्री नौकुड़ बनाते हैं । उस स्थान पर एक गायकी बड़ी मूर्ति मिट्टी की बनी हुई और उसके पास मिट्टी की जैसी सैकड़ों छोटी-छोटी मूर्त्तियाँ रक्खी जाती हैं । जब खेत जोता गया तब भीड़ गाय की बड़ी मूर्त्ति को टुकड़ा-टुकड़ा करके और छोटी मूर्त्ति को लूटकर ले-जाती है और उनकी मिट्टी को पीसकर अपने-अपने खेतों में डालती है ?" -चीनदेश चित्रमाला, पृ.४४

वस्त्र-वयन (कपड़ा बुनना)

वस्त्र-निर्माण कर्म को आजकल लोग बहुत निंद्रीय मानते हैं, परन्तु मैं पूछता हूँ कि भारत भर में सब वर्णों को स्त्रियाँ चरखा कातती हैं, इस प्रकार उत्तम-से-उत्तम सूत बना लेती हैं । जब इतने काम कर लेती हैं, तो वस्त्र बुनने में क्या दोष आ गया ? अतिशोक की बात है कि बुनाई को बुरा र कताई को अच्छा मानना । हाँ, इतनी बात अवश्य है कि बुनाई के हेतु अनेक प्रकार की सामग्री की आवश्यकता होती है, जो प्रत्येक मनुष्य नहीं रख सकता । यह सत्य है, परन्तु जो धनिक समर्थ हैं वे रक्खें और इसका व्यापार भी करें, इसमें क्या क्षति,परन्तु मैं देखता हूँ वस्त्र-वयनकर्त्ता तुन्तुवाय (जुलाहे) की एक पृथक् जाति ही भारत में बनी हुई है और सभ्य समाज में नीच मानी जाती है । इस श्रमजीवी को नीच मानना बहुत ही अनुचित है । यदि यह वस्त्र न बनाए तो

शोभा, सुन्दरतादि सभी जाती रहे, सब जङ्गली बन जाएँ।

मैं इस प्रकरण में दिखलाऊँगा कि ऋषि लोगों को भी वस्त्र बनाने की आज्ञा है और पूर्व समय में रुई कातना-बुनना आदि के समान प्रत्येक गृह में देवियाँ विविध प्रकार के वस्त्र भी अपने हाथ से बुन लेती थीं। यह कर्म अनुचित नहीं माना जाता था। जैसे आजकल द्विज भी कम्बल, शाल, दुशाला, पीताम्बर, अनेक प्रकार के कौशेय-वस्त्र, खटिया, चारपाई, पर्यङ्क आदि बना लेते हैं और इस कर्म को अनुचित नहीं मानते, वैसे ही पूर्व समय में सब वर्णों के नारी और नर सब प्रकार के वस्त्र बुन लिया करते थे।

ऋषि और मेषलोम से वस्त्र-वयन

प्रत्यर्धिर्यज्ञानामश्वहयो रथानाम्। ऋषिः स यो मुर्हितो विप्रस्य यावयत्सखः ॥५॥ आधीषमाणायाः पतिः शुचायाश्च शुचस्य च। वासोवायोऽवीनामा वासंसि मर्मृजत् ॥६॥

-ऋ. १०।२६

ऋषि कौन-कौन कार्य करते हैं, इसका संक्षेप में वर्णन है। **ऋषिः**=ऋषि **यज्ञानाम्+ प्रत्यर्धिः**=यज्ञों के फैलाने वाले हैं। **रथानाम्+ अश्वहयः**=रथ सम्बन्धी अश्वविद्या के ज्ञाता ऐसे **यः**=जो ऋषि हैं **सः+मनुर्हितः**=वे मनुष्य हितकारी होते हैं और **विप्रस्य+ यावयत्सखः**=मेधावी विद्वानों के दुःखों के नाश करने वाले सखा हैं ॥५॥ पुनः **आधीषमाणायाः**=बच्चा देनेवाली भेड़ी **शुचायाः**=लोमों से देदीप्यमान भेड़ी और **शुचस्य च**=पवित्र भेड़ों के **पतिः**=पालक हैं और **अवीनाम्**=भेड़ों के वालों से **वासोवायः** =वस्त्र बुननेवाले हैं और **वासांसि**=बुने हुए अनेक वस्त्रों का **आ+मर्मृजत्**=परिशोधन करने हारे हैं।

अवि=भेड़-भेड़ी। **वास**=वस्त्र। यहाँ विस्पष्ट कहा गया है कि ऋषि लोग लोमों से वस्त्र-निर्माण करते हैं। अनेक ऋचाओं से पता लगता है कि मनुष्य मात्र को बकरी, भेड़ आदि पशु रखने की आज्ञा है। जब ऋषियों को वस्त्र बुनने की आज्ञा है, तब जुलहे को हम क्यों कर घृणित मान सकते हैं?

विद्वान् का वस्त्र-वयनकरना

सीसेन तन्त्रं मनसा मनीषिणा ऊर्णासूत्रेण कवयो वयन्ति। -यजुः० १९।८०

मनीषिणः=मननशील पुरुष **सीसेन+ तन्त्रम्**=सीस=सीसा धातु से **तन्त्रम्**=अङ्गद= भूषणविविशेष **वयन्ति**=बनाते हैं और **कवयः**=विद्वान् पुरुष **ऊर्णासूत्रेण**=ऊनी सूत से **तन्त्रम्+वयन्ति+मनसा**=विचारपूर्वक पट (वस्त्र) बनाते हैं-

तन्त्रं राष्ट्रे च सिद्धान्ते परच्छन्दाप्रधानयोः। अङ्गदे कुटुम्बकृते तन्तुवाये परिच्छदे॥ इति॥

'तन्त्र' शब्द अनेकार्थ है। यहाँ विस्पष्ट कहा है कि मनीषी और कवि लोग परिधेयभूषण और ऊनी वस्त्र-वयन करते हैं। वैदिक और आजकल के सिद्धान्त में कितना भेद होगया है।

जुलाहे का व्यवसाय

तन्तुं तन्वन्रजसो भानुमन्विहि ज्योतिष्मतः पथो रक्ष धिया कृतान्। अनुल्बणं वयत जोगुवामपो मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।

-ऋ. १०।५३।६

तन्तुम्। तन्वन्। रजसः। भानुम्। अनु। इहि। ज्योतिष्मतः। पथः। र। धिया। कृतात्। अनुल्बणम्। जोगुवाम्। अपः मनुः। भव। जनय। दैव्यम्। जनम्॥

हे मनुष्यो! **रजसः+भानुम्**=अनेक रंगों की प्रकाशक किरण के समान देदीप्यमान **तन्तुम्+तन्वन्**=सूत को बनाते हुए आप **अनु+इहि**=पूर्वजों का अनुकरण किया करें और इस प्रकार **धिया+कृतान्**=ज्ञान के द्वारा निर्मित **ज्योतिष्मतः पथः**=उत्तम पथ, अर्थात् वस्त्रादि निर्माण-कर्म की **रक्ष**=रक्षा कीजिए और **अनुल्बणम्**=शान्तिपूर्वक **जोगुवाम्**=जोगू=जुलाहों के **अपः**=कार्य को **वयत**=करो। इस प्रकार **मनुः+भव**= मननशील मनुष्य बनों और सदा **दैव्यम्+ जनम्**=उत्तम स्वभाव के मनुष्य को **जनय**= उत्पन्न करो।

'अप' नाम कर्म का है (नि. २.१)। 'धी' यह नाम भी कर्म का है! 'व्यत' वेञ् तन्तुसन्ताने 'वे' धातु का प्रयोग बुनने अर्थ में सदा आता है। इसी हेतु जुलाहे को 'तन्तुवाय' कहते हैं, **तन्तुम्+वयतीति**=यहाँ 'जोगू' नाम जुलाहे का है, इसी शब्द से 'जुलाहा' पद निकला है।

स्त्री और वस्त्र-निर्माण

पुनः समव्यद् विततं वयन्ती मध्या कर्तोर्न्य धाच्छक्म धीरः।

-ऋ. २।३८।४

पुनः=पुनः-पुनः। **समव्यत्**=सिमिटती है। **वितत**=विस्तीर्ण। **वयन्ती**=कातती हुई, सूत बनाती हुई नारी। **मध्या**=मध्या। **कर्तोः**=कर्म। **न्यधात्**=रखता है। **शक्म**= शक्य। **धीर**=धीर पुरुष।

रात्रि **वयन्ती**=वस्त्र बुनती हुई नारी के समान **विततम्**=विस्तीर्ण आलोक को **पुनः समव्यत्**=पुनः-पुनः पूर्ववत् समेटती है और **धीरः**=धीर पुरुष **कर्तोः**=जो कर्म **शक्म**= करने योग्य था, उस कर्म को **मध्या**=बीच में ही न्यधात्=छोड़ देते हैं, क्योंकि सन्ध्योपासन का समय उपस्थित हुआ। यह सन्ध्याकाल का वर्णन है।

'वयन्ती वस्त्रं वयन्ती नारीव' सायण। इससे सिद्ध है कि स्त्रियाँ वस्त्र बुनती थी। वेदों में विविध प्रकार के वर्णन आते हैं। कहीं साक्षात्, कहीं परम्परा से। यहाँ उपमामात्र से दिखलाया गया है कि नारियों के लिए भी वस्त्र-वयन करना वेदविहित है। ऐसी उपमा प्रायः वेद में आती रहती है, यथा-

साध्वपांसि सनता न उक्षिते उषासानक्ता वय्येव रण्विते। तन्तुं ततं संवयन्ती समीची यज्ञस्य पेशः सुदुघे पयस्वती।

-ऋ. २।३।६

यहाँ 'वयी' शब्द का प्रयोग ही कहता है कि स्त्री को कपड़ा बुनना चाहिए, क्योंकि यह शब्द स्त्रीलिङ्ग है।

विवाह-पद्धति में स्त्री को वस्त्र देने के समय एक ऋचा पढ़ी जाती है, जिसका भाव यही है कि कातना, बुनना, सीना, पिरोना, किनारे में झालर आदि लगाने का कार्य स्त्रियाँ करें। वह मन्त्र यह है-

या अकृन्तन्नवयन् याश्च तत्निरे या देवीरन्ताँ अभितोऽ ददन्त। तास्त्वा जरसे सं व्ययन्त्वायुष्मतीदं परि धत्स्व वासः॥

-अथर्व. १४।१।४५

या+देवीः=जिन देवियों ने **अकृन्तन्**= प्रथम रुई को चरखे में काता है, **अवयन्**=पीछे वस्त्र वयन किया है और **याः च**=जिन देवियों ने **तत्निरे**=उस वस्त्र में अन्य सूत लगा-लगाकर (जैसे कि कपड़ों पर बेल-बूटे

Date of Publication 2nd and 17th of every Month, Date of Posting 3rd and 18th of every Month
आर्य जीवन 18-12-2023 Registered-Reg. No. HD/783/2021-23 RNI No. 52990/93

ఆర్య జీవన్

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Editor : Sri Vithal Rao Arya, M.Sc., L.L.B., Sahityaratna.
Arya Pratinidhi Sabha A.P.-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-500095.
Phone : 040-24753827, 24756983, Narendra Bhavan : 040-24760030.
Annual Subscription Rs. 250/- సంపాదకులు : విఠల్ రావు ఆర్య, ప్రధాన సభ.

To,

यज्ञ बाद पौधारोपण करते हुए चित्र में रोपित पौधे दिखलाए गये हैं

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR.
Editor : Sri Vithal Rao Arya E-mail : acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691.

సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్ రావు ఆర్య, ప్రధాన సభ, ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్ బజార్, హైదరాబాద్-95. Ph : 040-24753827, E-mail : acharyavithal@gmail.com
संपादक : श्री विट्ठल राव आर्य, प्रधान सभा ने सभा की ओर से आकृति प्रिन्टर्स, चिक्कड़पल्ली में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया।
प्रकाशक : आर्य प्रतिनिधि सभा, आं.प्र.- तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद-500 095. Narendra Bhavan Ph : 040 24760030.